www.thearyasamaj.org

||ओ३म्||

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम् अपघ्नन्तो अरावणः॥

आर्य संकल्प

(बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष-36 नवम्बर अंक-11

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
कार्यालय : श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 (बिहार)

www.thearyasamaj.org

सम्पादक
रमेन्द्र कुमार गुप्ता
मो. 9334184136

सह सम्पादक
संजय सत्यार्थी
मो. 9006166168
प्रेम कुमार आर्य
मो. 9570913817

सम्पादक मंडल
पं० व्यासनन्दन शास्त्री
श्री बिन्देश्वरी शर्मा
मो. 8544088138

संरक्षक
गंगा प्रसाद
सभा प्रधान

कोषाध्यक्ष
सत्यदेव गुप्ता
स्वत्वाधिकारी एवं प्रकाशक
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन
नयाटोला, पटना-800 004
दूरभाष : 07488199737
E-mail_arya.sankalp3@gmail.com
सदस्यता शुल्क
एक प्रति : 15/-
वार्षिक : 120/-

मुद्रक :
जय उमा प्रिन्टर्स
मो. 9430246879

संपादकीय

मृत्यु से जीवन पाया

महर्षि दयानन्द आर्यों का सौभाग्य सूर्य था, जिन्होंने अविद्या, अन्धकार के कूप में गिरे लोगों को उज्जवल प्रकाश का दिग्दर्शन करवाया। वैदिक पथ को आलोकित कर संसार को वेदों की ओर लौटने का संदेश दिया। वेदों के उद्धार के लिये आर्य समाज का पौधा लगाया साथ ही कण्वन्तोविश्वमार्यम् का उद्घोष कर संसार को आर्य अर्थात् श्रेष्ठ बनने की अपील की। ऋषि दयानन्द रूपी सूर्य के प्रकाश से रूढ़ीवाद पाखण्ड, गुरुडम, अज्ञानता आदि के बादल छटने लगे। फिर भी वेद भाष्कर को ढक लेने का प्रयास दुष्टों के हर प्रयास को खण्डित कर दिया तब स्वार्थी, दुराचारी, दुष्ट लोग ऋषि के प्राण लेने पर उतारू हो गये। अनेकों बार दीप बुझाना चाहा, परन्तु बचाने वाला बचाता ही रहा।

अन्ततः 29 सितम्बर 1883 ई० को ऋषिवर को दूध में विष पिलाने में सफल हो ही गये। हित के बदले अहित, अमृत के बदले विष कर्त्तव्यहीनता की यह, पराकाष्ठा हैं, विधर्मी मतों के प्रचारको ने राज वैश्या के साथ सम्वेदना का भाव प्रकट करते हुए पाचक जगनाथ द्वारा विष दिलवा दिया। जब ऋषि को रूग्न होने का भान हुआ तो उदार भाव का परिचय देते हुए घातक को कुछ रू० देकर फांसी से बचने के लिये भगा दिया। निरंतर एक मास तक तीक्ष्ण पीड़ा के समय भी शांत रहकर सिद्ध कर दिया कि बाल ब्रह्मचारी में कितनी शहन शक्ति होती है।

ऋषि के रूग्न होने की सूचना जब लाहौर पहुँचा तो आर्य समाज लाहौर की अन्तरंग सभा ने उप प्रधान श्री जीवन दास और पं० गुरूदत्त विद्यार्थी को सेवा सुश्रुषा के लिये भेजने का निश्चय किया। दोनों महाशय ऋषि की सेवा में अजमेर पहुँच गये। पं० गुरूदत्त विद्यार्थी ने जिस भक्ति भाव से ऋषि की सेवा की उससे लोग बहुत प्रभावित हुए। रोग को बढ़ता देख आर्यो ने अजमेर के सिविल सर्जन कर्नल न्यू मैन को बुलाया। डा० न्यूमैन ऋषि को देखकर आश्चर्यचकित रह गये। रोग इतना भयंकर और

www.thearyasamaj.org

आर्य संकल्प

-: सूची :-

क्रम	विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	सम्पादकीय	
2.	वेद मंत्र	1
3.	सत्य और अहिंसा	2
4.	सृष्टि में प्रजनन की प्रक्रिया	7
5.	विश्वजित्	10
6.	ऋषि दयानन्द	14
7.	कविता	26
8.	समाचार	27

इस पत्रिका में दिये गये लेख लेखकों के अपने विचार हैं, इससे सम्पादक का कोई सम्बन्ध नहीं है ।

नवम्बर

ऐसी हों नारियां

सुमंग्ली प्रतरणी गृहाणां सुशेवा
पत्ये श्वसुराय शंभूः।
स्योना श्वश्र्वै प्र गृहान्विशेमान्॥

(अथर्व० 14 । 2 । 26)

शब्दार्थ- हे देवी! तू (गृहाणाम्) घरों, गृहस्थों, घर के लोगों की (सुमंग्ली) कल्याणकारिणी (प्रतरणी) तारनेवाली, पार ले जाने-वाली नौका के समान है। तू (पत्ये) पति के लिए (सुशेवा) सुसेवा-कारिणी बन। (श्वसुराय) श्वसुर के लिए (शंभूः) शान्तिदायक और कल्याणदात्री हो (श्वश्र्वै) सास के लिए (स्योना) सुख देनेवाली होकर (इमान् गृहान्) इन घरों, इन गृहस्थों में (प्रविश) प्रवेश कर।

भावार्थ- घर में प्रवेश करनेवाली नववधुत्रों में क्या-क्या गुण और विशेषताएँ होनी चाहिएँ, वेद ने बहुत थोड़े-से परन्तु अत्यन्त सार-गर्भित और मार्मिक शब्दों में वर्णन कर दिया है-

1. नववधुओं को पारिवारिक जनों को दु:खों से तारनेवाली होना चाहिए।
2. पति की सेवा और सुश्रूषा करके उसे सदा प्रसन्न रखना चाहिए।
3. श्वसुर के लिए शान्ति और कल्याणदात्री होना चाहिए।
4. सास के लिए सुख देनेवाली होना चाहिए।
5. इन चार गुणों से युक्त ही वधुओं को पति-गृह में प्रवेश करना चाहिए।

जिन घरों में ऐसी सुशीला नारियाँ होतीं हैं वे घर स्वर्ग बन जाते हैं, वहाँ दु:ख और कष्ट नहीं होते। सभी व्यक्ति प्रसन्न और हर्षित रहते हैं।

■

www.thearyasamaj.org

सत्य और अहिंसा में प्रमुख कौन?

- डॉ० जितेन्द्र कुमार

सत्य और अहिंसा में प्रधान कौन? यह शीर्षक हमें सोचने के लिए विवश करता है कि क्या इन दोनों में प्रथम और द्वितीय भी हो सकते है? वैसे तो दोनों का महत्व अपने-अपने स्थान पर अत्यन्त उपादेय है। दोनों अद्वितीय हैं। दोनों में से परस्पर कोई भी एक दूसरे का स्थान नहीं ले सकता है। दोनों अतुलनीय हैं। दोनों परस्पर पूरक भी है। दोनों की महत्ता जीवन में सदैव दिखाई देती है। फिर भी शास्त्रों एवं विद्वानों ने जहाँ अहिंसा को परम धर्म 'अहिंसा परमो धर्मः' माना है वहीं सत्य को ईश्वर 'सत्यं ज्ञानम् अनन्तं ब्रह्म' कहा है। सत्य को विजय का वरदान और मूल स्रोत 'सत्यमेव जयते' कहा गया है। योगदर्शन के प्रणेता महर्षि पतंजलि यम और नियमों में अहिंसा को ग्रहण करते है, तदनन्तर सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह इत्यादि को। अहिंसा की व्याख्या करते हुए महर्षि व्यास न केवल अहिंसा को प्रथम कहते हैं अपितु अन्य सभी सत्यादि यमों एवं नियमों को अहिंसा के आश्रित ही स्वीकार करते हैं। उनकी दृष्टि में अहिंसा के लिए सत्यादि व्रतों और नियमों का पालन करना अभीष्ट है। सत्यादि यमों के आचरण से अहिंसा परिपुष्ट होती है। इन सबका उद्देश्य अहिंसा को सिद्ध करना ही बताया है। सत्य आदि शेष यम और सब नियम अहिंसा मूलक है। अहिंसा उन सबका मूल है। इन सबके मध्य मुख्य अंग है। अपने अंशदान से अहिंसा को पूर्णरूप में सिद्ध करने के लिए ही इनका प्रतिपादन है। अहिंसा का शुद्ध, स्वच्छ रूप सर्वांश में निखर सके इसी प्रयोजन के लिए सत्य आदि यम के अंग तथा नियमों का उपादान किया गया है। यम नियमों में अहिंसा के प्राधान्य को प्रकट करने के लिए आचार्यों ने पंचशिख के एक संदर्भ को उद्घृत किया है-

स खल्वयं ब्राह्मणो यथा-यथा
व्रतानि बहूनि समादित्सते तथा-तथा
प्रमादकृतेभ्यो हिंसानिदानेभ्यो निवर्त्त
मानस्तोमेवावदातरूपामहिंसा करोति।।

निश्चित ही यह ब्रह्म प्राप्ति के लिए पथ का पथिक जैसे-जैसे बहुत से व्रत-नियमों को आचरण में लाने के लिए उत्सुक एवं प्रगतिशील रहता है, वैसे-वैसे यह प्रमाद से किए गए हिंसा के कारणों से दूर रहता हुआ। उस शुद्ध, स्वच्छ, निर्दोष अहिंसा को प्राप्त कर लेता है। आत्मा में अहिंसा की प्रतिष्ठा होने पर योगी का संसार में कोई विरोधी नहीं रहता है। उस दशा में योगी सबकी अनुकूलता में निर्बाध अपने पथ पर बढ़ता हुआ सफलता प्राप्त कर लेता है।

www.thearyasamaj.org

संसार तथा साहित्य में सत्य और अहिंसा की महत्ता को प्रकट करने वाले वाक्य प्राप्त होते हैं। परन्तु पतंजलि ऋषि अहिंसा को प्रथम स्वीकार करते हैं। ऋषि पारद्रष्टा होता है, दूर द्रष्टा होता है। सहसा किसी बात को कहने में संकोच भी करता है। अतः निश्चित रूप से ऋषि ने अपने मन में कोई न कोई गम्भीर रहस्य रखकर ही अहिंसा को प्रधानता की हैं ऋषि की उस दृष्टि को ही यहाँ समझना अभिप्रेत है। सत्य एक भावात्मक सत्ता है। इस भावात्मक सत्ता को प्रकट करने के लिए ही भाषा की अपरिहार्य रूप से आवश्यक्ता है भाषा भावों की संवाहिका है। सत्य भाव को अभिव्यक्ति प्रदान करने के लिये हिंसित भाषा का प्रयोग सर्वथा अनुपयुक्त ही होगा, अर्थ का अनर्थ करने वाला होगा, सत्य भाव को ही मिथ्या बनाने वाला होगा। इसलिए सत्य को प्रकट करने के लिए अहिंसित भाषा की अनिवार्य रूप से आवश्यकता है। अतः सत्य और अहिंसा में अहिंसा का प्रयोग प्रथम है.... प्रधान है। सत्य हिंसित भी हो सकता है। उसे अहिंसित बनाकर प्रयोग करना ही प्रिय सत्य की ओर संकेत है। मनुस्मृति का निम्न श्लोक इस प्रसंग में बहुत प्रसिद्ध है।

सत्यं ब्रूयात प्रियं ब्रूयात् न ब्रूयात् सत्यमप्रियम्
प्रियं च नानृतं ब्रूयात् एष धर्म सनातनः॥

अर्थात् सत्य बोलना चाहिए परन्तु प्रिय सत्य बोलना चाहिए। अप्रिय सत्य नहीं बोलना चाहिए तथा प्रिय झूठ भी नहीं बोलना चाहिए। यह मनीषियों द्वारा प्रतिपादित सनातन धर्म है। उक्त श्लोक में तीन प्रकार से एक ही बात को सम्पुष्ट करते हुए कहा गया है। सत्य बोलें परन्तु प्रिय अर्थात् अहिंसित सत्य ही बोलें। यहाँ सत्य बोलने पर जितना बल दिया गया है उतना ही बल प्रिय बनाकर सत्य बोलने पर दिया गया है। द्वितीय वाक्य में अप्रिय सत्य न बोलने का निर्देश यह संकेत करता है कि मौन नहीं रहना है अपितु बोलना सत्य सही है। सत्य बोलने का प्रतिवाद नहीं है प्रत्युत अप्रिय सत्य का अर्थात् हिंसित सत्य के प्रयोग का परित्याग या प्रतिषेध है। इसका अभिप्राय भी हुआ है कि अहिंसित सत्य के प्रयोग पर ही बल दिया गया है। तृतीय चरण में यह न समझ लिया जाय कि प्रिय झूठ बोलने की तात्पयार्थ से स्वीकृति या समर्थन मिल गया है अतः प्रिय झूठ भी न बोले ऐसा कहकर प्रिय सत्य की अभिव्यक्ति पर ही संपूर्ण बल दिया गया है, और इसको सनातन धर्म भी कहा है।

कटु सत्य की, कठोर सत्य के प्रयोग की प्रायः निन्दा वर्णित है परन्तु प्रिय सत्य की सर्वत्र प्रशंसा एवं स्तुति की गई है। प्रिय सत्य का प्रयोग शब्दों का अहिंसित तथा उपयुक्त संचय चाहता है। इसके अभाव में सत्य सर्वत्र, सदैव सहसा विजयी नहीं होता। सत्य का प्रयोक्ता सत्य के दम्भ में अनेक असावधानियों

www.thearyasamaj.org

के कारण कठिनाइयों में पड़ जाता है। सत्य अनेक बार दम्भी भी होता है उसे अहिंसित अर्थात् विनयशील प्रिय बनाकर ही प्रयोक्ता सफलता की आशा कर सकता है। इसलिए सत्य को अहिंसा के प्रयोग की सतत अपेक्षा रहती है।

दम्भी (हिंसित) सत्य पराजय को भी प्राप्त होता है। असत्य दम्भ नहीं करता। असत्य अधिकांश रूप से शालीन एवं विनयी दिखाई देता है। तभी तो प्रस्तुति के आधार पर असत्य भी विजय को प्राप्त होता है। वह असत्य की विजय नहीं है प्रत्युत अहिंसा जन्य प्रस्तुति की विजय है, प्रकारान्तर से अहिंसा की ही विजय है। जिस प्रकार असत्य को अन्य अनेक प्रकार की प्रविधियों से जिताया जाता है उसमें निर्विवादित रूप से अहिंसा का समग्र दृष्टि से योगदान रहता है उसी प्रकार सत्य को भी अहिंसा रूपी शस्त्र से ही जिताया जा सकता है। अन्यथा सत्य स्वयं स्वतः नहीं जीत पाता है। सत्य को भी परिश्रमपूर्वक अहिंसा के प्रयोग के साथ ही जिताना पड़ता है। कुछ लोग सत्य को विजयी बनाने के लिए असत्य का आश्रय लेने का भी पक्ष लेते हैं। असत्य के आश्रय से सत्य अविश्वसनीय हो जाता है। जब कि सत्य तो होता ही वह है जो विश्वास बनाये और उसमें वृद्धि करे। अतः असत्य के आश्रय का अनुमोदन अथवा समर्थन कभी नहीं किया जा सकता है। अहिंसा का आश्रय करने से सत्य विश्वसनीय भी रहता है और विजयी भी होता है। अहिंसित सत्य के प्रति जन समर्थन भी प्राप्त होता है तथा सत्य प्रेरणा भी देता है।

सत्य वह सोना है जो अहिंसा रूपी हीरे की मणि का सम्पर्क पाकर निखर उठता है, कुन्दन बन जाता है, अपनी चमक बढ़ा लेता है, कान्ति और दीप्ति से आलोकित हो जाता है। वर्तमान युग में गाँधी जी इसके साक्षात् और प्रमाण है। गाँधी जी की सफलता का यही एक मात्र मूल मंत्र है। वे सत्य के प्रयोग को अहिंसात्मक रूप देकर व्यवहार में लाते थे यही कारण था कि गाँधी जी के साथ करोड़ों लोग समर्थन में भी आ जाते थे। गाँधीजी ने सत्य के लिए अहिंसित प्रयोग से जन समुदाय में चेतना का संचार किया। लोग उनके साथ मरने के लिए खड़े हो गये, पिटने के लिए तैयार हो गये। मारना आसान है। पीटना सरल है, परन्तु मरना कठिन है, पिटना साहस का कार्य है। कायर पिटते नहीं और पीटते भी नहीं परन्तु किसी असत्य और अन्याय के विरोध में महाशक्ति से पिटना, सोद्देश्य विरोध प्रकट करना कायरता नहीं, वीरता है। सहिष्णुता साहस है किन्तु सत्य के लिए। सहिष्णुता ही अहिंसा है। गाँधी जी अंग्रेजों से भी सहानुभूति पूर्ण व्यवहार के पक्षपाती थे किन्तु उनकी और सत्य सिद्धान्तों से

www.thearyasamaj.org

समझौता न करना अपने स्थान पर है। हम प्रायः इसमें भेद करने में उदार हो जाते हैं और अशुद्धि कर ही जाते हैं। कोई बात एक बार भी धीरे से सुदृढ़ तरीके से कही जा सकती है यह कमजोरी नहीं है अपितु अहिंसा है। लोग इसको अनेक बार अपने पक्ष में देखते हैं यह उनकी भूल है। कोई बात जोर से ही कही जाय एवं बार-बार कही जाए तभी सुदृढ़ होगी, ऐसी भ्रान्त धारणा अपास्त कर लेनी चाहिए। यही गाँधी की विचारधारा (अहिंसा पर आधारित सत्य) सभी को साथ लेकर चलने में सफल हुई। **जैसे विनय विहीन विद्या विनाश का पथ प्रशस्त करती है वैसे ही अहिंसा रहित सत्य विपर्यय का कारक होता है।** 'सत्यं शिवं सुन्दरम्' वाक्य की व्याख्या भी अहिंसा मूलक दिखाई देती है। शिवात्मक, कल्याणात्मक, अहिंसात्मक सत्य ही सुन्दर है। जो सत्य तार्किक शिव है, कल्याणकारी है, अनवद्य है, अहिंसित है, वही शिव है, जो सत्य के लिए है और वही सुन्दर है जो सत्य तथा शिव है। अभिप्राय हुआ अहिंसात्मक सत्य ही सुन्दर है। सुन्दरता सबको प्रिय है। सर्वप्रियता के लिए अहिंसक असत्य की ही आवश्यकता है। अहिंसक असत्य भी अन्ततः हिंसक ही होता है। अतः अहिंसक असत्य का भी त्याग करना अभिप्रेत हैं लिखते और बोलने में तुलना करें तो लिखते समय व्यक्ति अधिक अहिंसा का आश्रय ग्रहण करता है। जब कोई बोलते हुए हिंसित शब्दो का प्रयोग करता है तब उसे यही कहा जाता है कि क्या तुम इसको लिख सकते हो? वह लिखने से बचता हैं क्योंकि प्रमाण के रूप में पकड़ में आता है और वह स्वयं भी उस लिखे हुए का समर्थन तथा अनुमोदन नहीं कर पाता है। अतः वर्तमान में भी अधिकांश जन समुदाय लिखने में शब्दों का चयन उचित और अहिंसित ही करने में विश्वास व्यक्त करता दिखाई देता है। जब कभी भी लड़ाई–झगड़ा होता है तो वह हिंसित भाषा के प्रयोग से प्रारम्भ होता है और अवसान अहिंसित भाषा के प्रयोग पर ही निर्भर करता है। इसलिए अहिंसा ही प्रधान तत्व है।

सत्य को अभिव्यक्ति प्रदान करने में शब्दों की दरिद्रता का नितान्त अभाव ही अहिंसा है। अच्छे सवार को यदि चुनने का अधिकार दिया जाए वह ऊँची नस्ल का और उत्तम घोड़ा ही चुनेगा घटिया नहीं। आज के युग में मर्सिडीज़ कार का ही चुनाव होगा मारूति कार का नहीं। उसी प्रकार शब्दों का उत्तम, अनवद्य, अहिंसित प्रयोग ही सत्य की प्रतिष्ठा एवं महिमा को बढ़ाता हैं अहिंसा सत्य का स्वरूपाधायक तत्त्व भी है और उत्कर्षाधायक तत्त्व भी है। स्वरूपाधायक तत्त्व इसलिए कि शब्द संचय से सत्य के उत्कर्ष में वृद्धि करता हुआ सफल बनाता है। इसलिए अहिंसा सत्य का स्वरूपाधायक और उत्कर्षाधायक तत्त्व है।

www.thearyasamaj.org

जब भी सत्य पराजित होता है तो परिश्रम के अभाव में, निरभिमानता के अभाव में, उत्तम प्रस्तुति के अभाव में, अहिंसित प्रयोग के अभाव में। अन्यथा कोई कारण नहीं, कोई प्रश्न ही नहीं होता है कि सत्य परास्त हो जाय। सत्य, की शक्ति अमित है, परन्तु उच्च स्वर उसकी शक्ति को क्षीण कर देता है। शब्दों के अनुपयुक्त प्रयोग उसकी धार को नष्ट कर देते है। उद्वेग पूर्वक कहे गये शब्द सत्य को सम्यग् रूप से प्रकट नहीं होने देते। सत्य अभिव्यक्त होते हुए भी अपनी छटा नहीं बिखेर पाता और छटपटाता रह जाता हैं किसी कोने से सिसकियाँ भरता रहता है। उस समय असत्य अट्टाहास करता है। असत्य सत्य को मुँह दिखाता है। उसे अनेक प्रकार से चिढ़ाता हैं। यही हिंसा है। यही सत्य हिंसित है। यहाँ पर अहिंसा के अभाव में सत्य हिंसित हुआ है, क्रन्दन कर रहा है। आँसू बहा रहा है। इसके विपरीत संयत स्वर, शिष्ट शब्द और सन्तुलित भाषा सत्य की धार को तीक्ष्ण करती है, न केवल सम्पूर्ण रूप से सत्य को अभिव्यक्त करती है अपितु उसमें कालजयी स्वरूप का आधान भी करती है। सत्य को सफलता के कदम चूमने की ओर अग्रसर करती है। सत्य को सम्पूर्ण रूप से तथा सर्वांश में उद्घाटित करती है। सत्य से सफलता का समन्वय कराती है। यही अहिंसा है। परिणाम अहिंसा नहीं है। पद्धति अहिंसा है और पद्धति ही प्रधान है, प्रथम हैं। सत्य परिणाम को दिशा प्रदान करता है तथा अहिंसा सत्य को परिणाम तक पहुँचाने से उच्चावच (ऊबड़ खाबड़) मार्ग से और भटकने से बचाती है। अहिंसा से सत्य स्थापित किया जाता है, प्रतिष्ठा को प्राप्त होता है, प्रेरणा प्रदान करता है, लोगों से जोड़ने का कार्य करता है।

वैदिक वाक्य जगत् की परिभाषा करते हुए कहता है कि– 'अग्निषोमातम्क जगत्' यह संसार अग्नि और सीमात्मक है। सूर्य और चन्द्र, अग्नि और जल, सत्य और अहिंसा जगत् को स्थित करने वाले पदार्थ हैं। जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश चन्द्रमा में सक्रमित होकर आहलादक, शीतल, सरस सुधा और सदश सोम वर्षक, सेवन करने योग्य हो जाता है उसकी प्रकार सत्य अहिंसा के साथ सर्वजन समर्थित एवं सर्वस्वीकार्य गुण के कारण व्यापक और सार्वजनीन हो जाता है। सत्य को सर्वग्राही बनाना ही होगा।

सत्य की सत्ता को जन-जन के हृदयों में स्थापित करने के लिए अहिंसा का आश्रय ही एक मात्र संजीवनी औषधि है।

सत्य की प्रतिष्ठा का आधारभूत मूल तत्त्व है। सत्य की अभिव्यक्ति का सक्षम, समर्थ और उत्तम साधन है। सत्य की प्रेरणा है। सत्य का प्राण है। सत्य की आत्मा है। सत्य की कान्ति को बढ़ाने वाला निर्विकल्पक तत्त्व है। सत्य स्वरूपथापक सार है। उत्कर्ष का प्रणेता है।

www.thearyasamaj.org

सृष्टि में प्रजनन की प्रक्रिया

– डॉ० सत्यव्रत सिद्धातालंकार

पिछले अंक का शेष....

आरगोनट- इस मछली में संयोग एक विचित्र ही रूप से होता है। नर के शरीर के बाएँ हिस्से पर एक छोटी-सी थैली होती है, जिसमें एक कुण्डलीदार उपकरण रहता है। यह उपकरण वस्तुतः एक नलिका होती है, जिसका सम्बन्ध अण्डकोषों से होता है। इस नलिका में वीर्य-कण संचित रहते है। पूर्ण वृद्धि होने पर वीर्य-कणों से भरी हुई यह थैली आरगोनट के शरीर से जुदा हो जाती है, जल में तैरती-तैरती मादा को ढूँढ लेती है और उसके साथ संयोग से मादा के बच्चे पैदा होने लगते हैं।

मक्खी- एक विशेष प्रकार की मक्खी पाई गई है, जो लाश की सड़ाँद की गन्ध से अण्डे देने लगती है। यदि इस मक्खी के गन्ध लेनेवाले ज्ञानतन्तु वाट दिये जायें, तो वह अण्डे देना बन्द कर देती है। नाक पर आघात लगने के अलावा उसे दूसरे स्थानों पर कितनी भी बड़ी चोट क्यों न लगे, वह अण्डे देना बन्द नहीं करती। जननेद्रिय के साथ घ्राण के सम्बन्ध का यह अद्‌भुत उदाहरण है।

मधु-मक्खी- कभी-कभी मधु- मक्खी, बिना किसी संयोग के अण्डे देने लगती है, और उन अण्डों से हमेशा नर-मक्खी पैदा होती है। नर के साथ संयोग के बाद वह छत्ते के कोष्ठों में अण्डे देती है और उन अण्डों से हमेशा मादा-मक्खी पैदा होती है। ऐसा प्रतीत होता है कि उसमें अपनी इच्छा के अनुसार, बिना संयोग के अण्डे पैदा करने की शक्ति है, जिसमें नर-मक्खियाँ पैदा होती है। परन्तु संयोग के बाद मादा-मक्खियों पैदा होती है। मधु-मक्खियाँ, बड़ी मेहनत से, सैकड़ो नर-मक्ख्यिों को एक 'रानी' मक्खी के सुख के लिए पालती है। संयोग के लिए आकाश में उड़ती है, तो नर-मक्खियों उसके पीछे हो लेती हैं। जब एक नर-मक्खी का रानी-मक्खी से संयोग हो जाता है, तब वह अपनी जननेन्द्रिय को उसके शरीर में छोड़कर मर जाता है। अन्य नर-मक्खियाँ अब किसी काम की नहीं रहती, अतः पतझड़ में शक्तिशाली मक्खियाँ उनका संहार कर देती हैं।

तितली- तितली का जनन-सम्बन्धी जीवन भी अनोखा है। यह कुछ महीनों तक रोमावृत अवस्था में रहती है; पिुर साल-दो-साल तक चमकते हुए कीट की अवस्था धारण करती है। इसके बाद दीवार की दराड़ में या पेड़ की छाल

www.thearyasamaj.org
के नीचे, रेशम के कीड़े के घर की तरह, एक खोल बनाकर सोई रहती है। अन्त में शानदार, रंग-बिरंगे परों का श्रृंगार कर टहनी-से-टहनी पर मँडराने लगती है। इसे भोजन की भी आवश्यकता नहीं होती। मादा बड़ी शांत होती है, चुपचाप पड़ी रहती है। नर की घ्राण-शक्ति इतनी तीव्र होती है कि उसे कई मीलों से मादा की गन्ध आ जाती है और ज्यों ही वह उड़ने-योग्य हो जाता हे, फौरन खेतों और जंगलों को पार करता हुआ अपनी प्रिया के पास आ पहुंचता है। प्रणय के प्रथम मिलन में ही वह अभागा इस संसार से चल बसता है। इसके बाद मादा भी अनगिनत अण्डे जनकर तत्क्षण अपने प्रीतम के पास उस लोक में पहुंच जाती है। यह प्रेम की कैसी करुण कहानी है। परन्तु वीर्य अर्थात् नर-तत्त्व के नष्ट होने से प्राणी को कितना नुक्सान पहुंचता है, इसका एक अद्‌भुत दृष्टान्त है।

चींटी- प्रकृतिवादी फेबर महोदय ने चींटियों के जनन-सम्बन्धी जीवन के विषय में अनेक आश्चर्यजनक बातें पता लगाई हैं। उनका कथन है कि कई चींटियाँ ऐसी होती हैं, जिनमें मादा संयोग के लिए उड़ती है। अनेक नर-चींटे उड़-उड़कर उसका आलिंगन करते हैं ओर उसके पीछे ही वे गर जाते है। इस प्रकार मादा के पास वीर्य-कणों की एक धरोहर हो जाती है, जिसमें विविध नरों के वीर्यकण सुरक्षित रक्खे रहते हैं। इसके बाद वह कई साल तक, कम-से-कम 11 व 12 साल तक बिना किसी नर के संयोग के अण्डे पैदा कर सकती है। वस्तुतः, यह बड़े अचम्भे की बात है कि इतने समय तक वीर्य-कण पूर्ण रूप से सुरक्षित पड़े रह सकते हैं।

बड़े प्राणियों तथा मनुष्यों में प्रजनन-प्रक्रिया

बड़े प्राणियों में नर तथा मादा के उत्पादक तत्त्वों के मिलने से जीवन उत्पन्न होता है। इस क्रिया के लिए कुछ सहायक तथा आवश्यक इन्द्रियाँ भी परमात्मा ने बनाई हैं- नर में 'शिश्न' तथा मादा में 'योनि'। इन प्राणियों में 'बहि:संयोग' न होकर 'अन्त:संयोग' होता है, और इसी प्रकार नये प्राणी का प्रारंभ होता है।

प्रत्येक जाति में- आदमी, घोड़ा, बकरी, सभी में- नर तथा मादा के जनन-सम्बन्धी गुह्य-अंग एक-दूसरे को दृष्टि में रखकर ही बनाये गए हैं। प्रत्येक जाति के नर तथा मादा के गुह्य-अंगों में एक आश्चर्यजनक पारस्परिक अनुकूलता पाई जाती है। यह प्रकृति का बड़ा भारी चमत्कार है। यह आश्चर्यजनक पारस्परिक अनुकूलता अपनी जाति को हमेशा बनाये रखने का जहाँ शक्तिशाली उपाय है, वहाँ

www.thearyasamaj.org

दो विभिनन जातियों के मिलने के मार्ग में रूकावट भी है।

नर तथा मादा की जनेन्द्रियों के मेल को 'संयोग' कहते हैं। 'संयोग' ही 'जनन-प्रक्रिया' है। जनन-प्रक्रिया में नर का वीर्य-कीट मादा के रज:कण से सिर्फ मिल ही नहीं जाता, अपितु रज:कण की पतली-सी झिल्ली को चीरकर अन्दर घुस आता है और उसके अन्दर के द्रव्य से मिल जाता है। फिर रज:कण की वृद्धि होने लगती है और उनका काम वही होता है, जिसका वर्णन 'कोष्ठ-विभोजन' की प्रक्रिया में पहले किया जा चुका है। कई जानवरों के रज:कणों में छोटे-छोटे छिद्र देखे गए हैं, जिनके द्वारा वीर्य-कीट को उनके अन्दर प्रविष्ट होने का मार्ग मिल जाता है। वीर्य-कीट की एक लम्बी-सी पूँछ होती है, उसकी सहायता से वह रज:कण को ढूँढता हुआ योनि में गति करता है। रज:कण की पृष्ठ को छूते ही वह उसे चीरकर जल्दी से अन्दर घुस जाता है। तत्पश्चात् रज:कण की पृष्ठ का भाग बाहर से जम जाता है, जिससे उसे कोई अन्य वीर्य-कीट चीरकर प्रविष्ट नहीं हो सकता। यह जमाव रज:कण की रक्षा के लिए कवच का काम देता है। जब कभी रुग्ण रज:कण में कई वीर्यकीट प्रविष्ट हो जाते हैं, तो एक अद्‌भुत प्राणी (मीस्टर) की उत्पत्ति होती है। यदि रज:कण में दो वीर्य-कीट प्रविष्ट हो जायें, तो एक मिला हुआ जोड़ा पैदा होता है। परन्तु यह अस्वाभाविक अवस्था है।

जब रज:कण वीर्य-कीट से संयुक्त हो जाता है, तब 'गर्भ' रह जाता है। रज:कण शीघ्र ही गर्भाशय की आभ्यन्तिरिक झिल्ली पर चिपक जाता है और गर्भावस्था का समय प्रारम्भ हो जाता है। मनुष्य-जाति में प्राय: यह समय कलेण्डर के नौ महीनों या चान्द्रमास के दस महीनों का होता है। इस समय स्त्रियों को मासिक धर्म नहीं होता। यद्यपि कई स्त्रियों में गर्भ ठहरने पर भी, विशेषत: प्रारम्भिक महीनों में, मासिक धर्म, कुछ विकृत रूप में पाया जाता है, तथापि यह असाधारण अवस्था है।

गर्भ के समय रज:कण विकास की विविध अवस्थाओं में से गुजरता है। इनमें से कई परिवर्तन हू-ब-हू वही होते हैं, जो हमें भिन्न-भिन्न प्रकार के छोटे प्राणियों में मिलते हैं। एक समय आता है, जब बढ़ता हुआ मानवीय भ्रूण अण्डे से पैदा हुई छोटी-सी चिड़िया-जैसा होता है। फिर समय आता है, जबकि वह कुत्ते की शक्ल से इतना मिलता है कि बड़े-बड़े विज्ञान-वेत्ता धोखा खा सकते हैं। ऐसा भी समय आता है, जब भ्रूण के हाथ-पाँव एक खास मछली के बाजुओं से बिल्कुल मिलने लगते हैं।

शेष पेज 13 पर.....

www.thearyasamaj.org

विश्वजित् अथवा सर्वमेध यज्ञ के कर्ता वाजश्रवस और महर्षि दयानन्द

– लेखक, कुन्दनलाल जी, चूनियावाला

कठोपनिषत् की कथा का इस तरह आरम्भ होता है, निश्चय से यह ऐतिहासिक कथा है कि मोक्ष की कामना करने वाले वाजश्रवस ने दान में सब कुछ दे दिया। अन्न-दान से जिसकी कीर्ति विशाल थी, उस वाजश्रवा ने ऐसा दान किया कि सर्वस्व अर्पण कर दिया, परन्तु उसका नचिकेता पुत्र था, उसने उसको किसी को न सौंपा। तब इस कुमार ने अपने पिता से पूछा-पिता जी मुझ को किस को दोगे। पुत्र की भोली भाली बात सुनकर कहा तुझे भगवान् के समर्पण करता हूँ। पिता का ऐसा वचन सुन कर नचिकेता, वैवस्वत् जो उस समय प्रसिद्ध ब्रह्मज्ञानी था। उस से ब्रह्म-ज्ञान उपार्जन करने के लिए उसके पास चला गया। और बाकी सारी की सारी कठोपनिषत् नचिकेता और वैवस्वत् मुनि के उत्तर प्रश्न से भरी है। जिसमें ब्रह्मज्ञान की बारीकियों को, अत्यन्त उत्तमता से समझाया गया है। यदि वाजश्रवस सर्वमेध यज्ञ न करता तो कठोपनिषद् न बनता, वाजश्रवस के सर्वमेध यज्ञ करने से ही कठोपनिषत् की रचना हुई, जिससे लाखों व्यक्ति अब तक भी ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति करते चले आ रहें है।

और संवत् 1924, मुताबकि 1867 के हरिद्वार कुम्भ के मेले पर स्वामी दयानन्द जी महाराज पहुंचे और सप्त सरोवर पर ठहरे जो हरिद्वार और ऋषिकेश के बीच में है और हरिद्वार से तीन कोस है। (जहां अब महात्मा हंसराज जी के पुरुषार्थ से मोहन आश्रम बना हुआ है।) यहां बाड़ा बांध कर और 9-10 छप्पर डालकर उन्होंने डेरा लगा लिया और एक पताका जिस पर पाखण्ड-खण्डनी शब्द लिखे थे अपने डेरे पर लगा दी। इस समय 15-16 संन्यासी और ब्राह्मण इनके साथ थे। वस्त्र उस वक्त गेरुवे पहनते थे। स्वामी जी ने प्रतिदिन उपदेश देना आरम्भ किया। जिसमें उन्होंने, मूर्तिपूजा, भागवत, तीर्थ, तिलक, छाप, कण्ठी आदि का प्रबल खण्डन किया, जिसकी चर्चा सारे मेले में फैल गई और सैकड़ों मनुष्य इस अद्भुत संन्यासी को जो हिन्दु धर्म के आधार पुराणों, मूर्तिपूजा, अवतारवाद आदि का खण्डन करता था, देखने को आने लगे, और उनके डेरे पर हर वक्त मेला सा लगा रहता था। दर्शकों में सभी प्रकार के लोग होते थे, किन्हीं के मन में उनका उपदेश घर कर जाता था, और उनके चक्षु खुल

www.thearyasamaj.org

जाते थे, भ्रम दूर हो जाते थे और उनके अनुयायी हो जाते थे। प्रचलित धर्म के ठेकेदार भी आते परन्तु स्वामी जी की युक्तियों का उत्तर न दे सकते तो खीझ कर उन्हें नास्तिक आदि कह कर अपना मन राजी कर लेते थे। कुछ संस्कृत पढ़े लिखे भी आते परन्तु उत्तर न देकर मौन होकर चले जाते। इस प्रकार महाराज का उपदेश प्रवाह चलता रहा। काशी के प्रसिद्ध पण्डित स्वामी विशुद्धानन्द जी भी मेले पर उपस्थित थे। उन्होंने यजुर्वेद अध्याय 3 के 11वें मन्त्र-'ब्राह्मणों अस्य मुख आसीत्' का यह अर्थ किया, कि ब्राह्मण परमेश्वर के मुख से पैदा हुए, क्षत्रिय भुजा से, वैश्य उरु से और शूद्र पांव से। स्वामी जी ने उसका खण्डन किया और कहा कि यदि इसका यही अर्थ है तो मुख से तो खंखार ही पैदा होता है। इसका शुद्ध अर्थ उन्होंने बतलाया है कि ब्राह्मण समाज के मुख हैं, क्षत्रिय भुजा हैं, वैश्य उरु, और शूद्र पैरों के समान हैं। इस घटना से स्पष्ट है कि स्वामी जी इस समय भी वर्ण-व्यवस्था गुण, कर्म, स्वभावानुसार ही मानते थे, जन्मगत नहीं। स्वामी जी ने एक पुस्तक भागवत खण्डन लिखी थी, जिसकी हजारों कापियां वह छपवा कर अपने साथ लाए थे, जो मेले में बांटी गई। बहुत से श्रद्धालु जन फल, मेवा, मिष्टान्न महाराज के लिए लाते थे, और सायंकाल तक अच्छी मात्रा में ये सब वस्तुएं इकट्ठी हो जाती थीं। महाराज वे सब पदार्थ दीन दरिद्री लोगों को बांट देते थे, अपने लिए कुछ भी नहीं रखते थे।

परन्तु जब महाराज ने मेले में यह अनुभव किया कि जनता अन्धकार में फंसी हुई है, संस्कृत के विद्वान् स्वार्थान्ध होकर लोगों को धर्म के नाम पर लूट रहे हैं। जिन लोगों का कार्य गृहस्थियों को धर्मोपदेश करना था। वे स्वयं ही उनको असत्य सिद्धान्तों के कीचड़ में फंसा कर धर्म-विमुख बना रहे हैं। साधु-समाज की भी वैसी ही दीन हीन दशा है, वे अनेक शाखाओं में विभक्त हैं। केवल नाम के ही साधु हैं पर गृहस्थियों से भी गये गुजरे हैं। कौन सा दुर्व्यसन है जो गृहस्थों में है, और इनमें नहीं। दूसरों में शान्ति-स्थापन तो दूर रहा, साधु संन्यासी स्वयं ही आपस में झगड़े बखेड़े पैदा करके अशान्त हो रहे हैं। धर्म केवल आडम्बर का नाम रह गया है। ऐसी दशा में स्वामी जी के मन में देशहित और समाज-कल्याण की तीव्र इच्छा उत्पन्न हुई उन्होंने सोचा कि इस प्रकार दूसरे साधुओं की तरह रहने सहने से काम नहीं चलेगा। इन्हें संसार की मोह-माया से सर्वथा ऊंचा उठना चाहिए। जो ज्ञान उन्होंने गुरु विरजानन्द की कृपा और वेद आदि सत्य शास्त्रों के अनुशीलन और अवगाहन से प्राप्त किया है, उसका निर्भय

होकर प्रचार करना चाहिए। जो सामग्री वस्त्र पुस्तक धन आदि उनके पास थी, वह भी उनके मार्ग में बाधाजनक प्रतीत होने लगा। इन विचारों का उनके मन में स्फुरण हो ही रहा था, कि एक दिन व्याख्यान देते हुए एक बार ही गद्गद हो गये, और "सर्वं वै पूर्ण स्वाहा" कह कर उठ खड़े हुए और उठने के साथ ही जो कुछ भी उनके पास था, उसे लोगों में बांटने लगे, स्वामी कैलाश पर्वत ने उनसे कहा– कि आप ऐसा क्यों करते हैं। तब उन्होंने शायर के शब्दों में कहा–

एहसान नाखुदा के उठाये मेरी बला।
किश्ती खुदा पै छोड़ दूं लंगर को तोड़ दू॥

अर्थात् मैं सब कुछ सत्य और स्पष्ट कहना चाहता हूं और यह तब तक नहीं हो सकता, जब तक मैं अपनी आवश्यकताओं को इतना कम न कर दूं कि मुझे किसी पर निर्भर न होना पड़े। इसलिए मैंने ऐसा किया है...

और अपने पास केवल एक कौपीन रख कर सब कुछ जो पास था बाँट दिया। और कवि के शब्दों में, ईश्वर को सम्बोधन करके यह कहते हुए–

अब सौंप दिया इस जीवन का, सब भार तुम्हारे हाथों में।
है जीत तुम्हारे हाथों में, और हार तुम्हारे हाथों में॥

गंगा किनारे विचरने के लिए चल दिये। सर्वमेध यज्ञ को ही विश्वजित् गंगा विश्वजित् यज्ञ कहा गया है, जिसको करने वाला "अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेने ध्यस्व वर्द्धस्व०" कहता हुआ अपने आत्मा को उस सर्व आत्मा को उस सर्व आत्मा के अर्पण कर देता है, और कहता है तैं तेरी महिमा को बढ़ाने चला हूँ, मेरा जो चाहे तू बना दे। मैंने अपना आप तेरे अर्पण कर दिया है। ऐसा करने से ही संसार जीता जाता है। किसी शायर ने क्या अच्छा कहा है–

मिटा दे अपनी हस्ती को अगर कुछ मर्तबा चाहे।
कि दाना खाक में मिल कर गुले गुलजार होता है॥

बस महर्षि भी उसी डगर पर चले, और अपने तप से, त्याग से, ब्रह्मचर्य और योगबल से गुले गुलजार बन कर संसार में सुगन्धि फैला गये, अपने आप को स्वाहा करके संसार के प्राणी मात्र के दु:ख की दवा बन गये, गुरुवर टैगोर ने भी कहा है– When the gain is completed by giving up, when love is fulfilled by self-sacrifice when passion is purified by penance of soul then only is heroism born which can save mankind from all defeat and disaster.

Tagore

इसी तरह महर्षि पूरे छ: साल तक सिर्फ एक लंगोट में गंगा तट पर विचरते रहे और गर्मी, सर्दी, वर्षा सब ऋतुओं की यातनाएं, नंगे बदन, नंगे पैर, नंगे सिर सहन करते रहे।

www.thearyasamaj.org

ताकि संसार का भला कर सकें और इस इष्टसिद्धि को उन्होंने प्राप्त कर लिया। और न सिर्फ खुद वाजश्रवस ऋषि की तरह सर्वमेध यज्ञ किया, बल्कि औरों को भी ऐसा करने की प्रेरणा दी, न सिर्फ खुद वाजश्रवस ऋषि बने बल्कि अपने जीवन से दो और वाजश्रवस ऋषि बनाए, उन्होंने भी कठोपनिषत् को अपने जीवन में अपने गुरु की भांति धारण किया।

पेज 9 का शेष....

इसके बाद भ्रूण का सारा शरीर बन्दर की तरह बालों से ढक जाता है। भ्रूण की अमिक वृद्धि के इन दृष्टान्तों को देकर विकासवादी कहा करते हैं कि मनुष्य तथा अन्य छोटे प्राणियों का उद्‌भव-स्थान एक ही है और मनुष्य तक पहुँचने में जिन-जिन अवस्थाओं में से हमें गुजरना पड़ा है वे सब अवस्थाएँ हम गर्भावस्था में गुजर जाते हैं। परन्तु ऐसा क्यों होता है, ऐसा करने की प्रकृति को क्यों आवश्यकता पड़ी- इसका विकासवादी कोई उत्तर नहीं देते। अस्ल में, इन उदाहरणों से यह सिद्ध नहीं होता कि मनुष्य की उत्पत्ति बन्दर से हुई है; हाँ, यह अवश्य पता चलता है कि इन विविध योनियों को बनानेवाला एक ही हाथ है, ऐसा हाथ जिसकी कारीगरी के एक-ही-से निशान सर्वत्र बिखरे हुए दिखाई देते हैं।

तीन दिवसीय आर्य प्रशिक्षण सत्र
दो दिवसीय आर्य प्रशिक्षण-सत्र सह
एक दिवसीय बलिदान दिवस
'समारोह'

स्थान- श्रद्धानन्द भवन, आर्य समाज मंदिर, एम. पी.बाग, आरा, दिनांक- शनिवार 21 दिसम्बर 2013 (प्रातः 9 बजे से संध्या 7.30 बजे तक) एवं दिनांक- रविवार 22 दिसम्बर 2013 (प्रातः 6.30 बजे से संध्या 5.30 बजे तक) दिनांक- सोमवार 23 दिसम्बर 2013 अमर हुतत्सा स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान दिवस।

आर्य समाज बरबीघा के नव निर्वाचित पदाधिकारी

प्रधानः-	श्री शिव मुनी वानप्रस्थ
उपप्रधानः-	श्री गौरव कुमार
मंत्रीः-	डॉ० केदार प्रसाद आर्य
उपमंत्रीः-	श्री गणेश शंकर एवं श्री रणवीर कुमार आर्य
कोषाध्यक्षः-	श्री धर्म देव प्रसाद आर्य
लेखा निरीक्षकः-	श्री अरूण कुमार

कार्यकारणी सदस्य

श्री मनोज कुमार गुप्ता	श्री बीरेन्द्र कुमार
डॉ० दामोदर प्रसाद वर्मा	श्री कृष्ण कुमार आर्य
श्री संदीप कुमार	श्री अशोक कुमार
श्री दामोदर प्रसाद आर्य	श्री प्रवीण कुमार
श्री उमेश कुमार	श्री भुनेश्वर प्रसाद

भवदीय

केदार प्रसाद आर्य, मंत्री, आर्य समाज

www.thearyasamaj.org

ऋषि दयानन्द के प्राणहरण व अपमान की चेष्टाएँ

1. अप्रैल 1868 में स्वामी जी गडियाघाट (जो एटा जिले में सोरों के पास है) पहुँचे। वहाँ एकदिन एक उजड़ ठाकुर अपने तीन साथियों के साथ तलवार व लाठी लेकर स्वामी जी को आघात पहुँचाने आये थे। कारण यह था कि सोरों चक्राड़िक्तों का गढ़ था, महाराज उनका विरोध करते थे। उस समय बलदेव भक्त भी वहाँ बैठे थे, उन्होंने उसे रोका, परन्तु वह न माना और स्वामी जी के बराबर बैठ गया। स्वामी जी ने उसे समझाया पर वह न माना। स्वामी जी वहाँ से उठकर दूसरी मढी में जा बैठे। उस ठाकुर ने अपने आदमियों को संकेत किया कि वे बलदेव को पकड़ लें। जब वे बलदेव गिरी की ओर लपके तो बलदेव (जो उण्डयेल जवान था) ने उनमें से एक का हाथ और एक का पैर पकड़कर वहीं गिरा दिया। इतने में अन्य लोग भी वहाँ आ गये और उन दुष्टों को पीटकर भगा दिया।

2. ज्येष्ठ सं० 1925 में स्वामी कर्णवास पधारे। कर्णवास के पास बरोली नाम का एक ग्राम है वहाँ के एक बडगूजर क्षत्रिय राव कर्णसिंह थे वे वृन्दावन के रंग्चारी के शिष्य थे, स्वामी जी द्वारा चक्रान्गितों का विरोध करने पर कर्णसिंह स्वामी जी से अप्रसन्न हो गया और स्वामी जी को मारने के लिये तलवार निकाल ली। महाराज ने उससे तलवार छीनकर पृथ्वी पर टेककर तोड़ दी और कहा कि कहे तो यह तलवार तेरे शरीर में घूँस दूँ। ठाकुर किशनसिंह भी वहीं उपस्थित थे और कहा कि अब यदि तूने महाराज के लिए एक शब्द भी कहा तो फौजदारी हो जायेगी। यदि तूने उपदेश नहीं सुनना तो चला जा। कर्णसिंह घबराया और लज्जित होकर अपने डेरे पर चला गया।

3. यही कर्णसिंह शरद पूर्णिमा पर पुनः गंगा स्नान को आया। पहली बार असफल होने पर इस बार उसने बैरागियों को उकसा दिया, परन्तु वे घबरा गये। अब उसने अपने सेवकों को तैयार किया। एकदिन रात्रि को कर्णसिंह के तीन सेवक स्वामी जी को मारने के लिए गये। आहट होने से स्वामी जी जाग गये। वे लोग डरकर भाग आये। कर्णसिंह ने फिर दोबारा भेजा। इस बार फिर स्वामी जी जाग गये और उनकी हुंकार सुनकर घातक स्वामी जी के पैरों में गिर पड़े। इसी बीच कैथलसिंह जो स्वामी जी की सेवा के लिये नियुक्त था, बहुत से ठाकुरों को बुला लाया। ठाकुर किशनसिंह ने कर्णसिंह को ललकारा पर

वह सामने नहीं आया उसके ससुर ने भं कर्णसिंह को कहा कि यदि तुम्हारे दिन अच्छे है तो तुरन्त यहाँ से चले जाओ। वह अपने ससुर की बात मानकर वहाँ से चला गया।

4. कर्णवास से स्वामी जी शहबाजपुर गये। वहाँ दो बैरागी एक ठाकुर के पास तलवार माँगने आये कि इस गप्पाष्ठक (स्वामी जी) का मूँड काटेंगे। ठाकुर ने उन्हें धमकाया। ठाकुर गंडसिंह ने जो कई गाँवो के जमींदार थे, ने भी उन लोगों को धमकाया।

5. फर्रुखाबाद में एक ज्वालाप्रसाद नामक मद्य एवं मांसाहारी ब्राह्मण था। एकदिन वाममार्गी उसे पालकी में डालकर स्वामी जी के पास ले गया। वह स्वामीजी के सम्मुख कुर्सी पर बैठकर उन्हें दुर्वचन कहने लगा। उसके व्यवहार से भक्त लोग दु:खी हुये और उसे पीट दिया। स्वामीजी को यह बात अच्छी नहीं लगी। इस घटना का पता लगने पर ज्वालाप्रसाद का सम्बन्धी 20-25 लठैतों को लेकर स्वामी जी को मरने आया, परन्तु स्वामी जी के दर्शन करते ही उसका इरादा बदल गया। फर्रुखाबाद के लाला जगन्नाथ ने स्वामी जी को एक सुरक्षित स्थान पर रहने की सलाह दी। स्वामी जी ने कहा- **यहाँ तो आप मेरी रक्षा कर लेंगे, परन्तु अन्यत्र कौन करेगा। मैंने आज तक अकेले भ्रमण किया है, आगे भी करूँगा। कई बार मेरे प्राणहरण की चेष्टा की गई, परन्तु सर्वरक्षक परमात्मा ने सर्वत्र मेरी रक्षा की है। भविष्य में भी वही करेगा, आप चिन्ता न करें।**

6. फर्रुखाबाद में ही एक परसाद नामी गुजराती ब्राह्मण वहाँ के नामी गुण्डों में एक था। कुछ द्वेषी लोगों ने पैंसो के लालच से उसे स्वामी जी को पीटने भेजा। वह मोटा लट्ठ लेकर स्वामी जी के पास गया। स्वामी जी के वार्तालाप से वह बड़ा प्रभावित हुआ और फिर आजीवन एक सदाचारी ब्राह्मण की तरह रहा।

6. (क) एक दिन महाराज विश्रान्त घाट पर जल में पैर लटकाये बैठे थे कि कुछ शरारती लड़कों ने रेत के गोले बनाकर स्वामी जी को मारने शुरू किये, परन्तु वे चुपचाप गोले खाते रहे और लड़कों को कुछ भी नहीं कहा। अन्त में जब आँख में कुछ रेते पड़ गये तो वहाँ से उठकर अन्यत्र चले गये।

7. काशी में एक बार महाराज गंगा तट पर अर्द्धर्निमीलित चक्षु होकर बैठे बड़े मधुर कण्ठ से सामगान गा रहे थे। तभी वहाँ मोहनलाल विष्णुलाल पाण्डया एक अध्यापक के साथ पहुँच गये। थोड़ी देर पश्चात् स्वामी जी ने पण्डया एवं अध्यापक महोदय को वहाँ से चले वे जाने को ही थे कि कुछ लोग लाठी-ढेले

www.thearyasamaj.org

लिये हुये वहाँ गये और महाराज पर ढेले फेंकने लगे। एक व्यक्ति ने आगे बढ़कर उन पर लाठी का प्रहार किया। स्वामी जी ने उसकी लाठी पकड़ ली और उसे गंडग में धकेल दिया। फिर निकट के एक वृक्ष से एक शाखा तोड़कर प्रहार करने वाले लोगों से बोले-आओ मित्रो, अब प्रहार करो मुझे निरा साधु ही न मानना। उन्होंने कई पर प्रहार किया। वे लोग भाग गये। स्वामी जी गंडक में तैरने लगे। स्वामी जी कभी-कभी मालकांडनी का तेल खाया करते थे और कहा करते थे कि इसे खाकर जल में बहुत देर तक रहा जा सकता है। कुछ लोग यह भी कहते हैं कि इसे गोले के साथ खाने से स्मरण शक्ति बहुत बढ़ जाती है। ईंट फेंकने वालों में पं० सूर्यकुमार शर्मा रईस, पुराना कानपुर भी थे। वे हलधर के शास्त्रार्थ में स्वामी जी पर ईंट फेंककर आये थे। उनका स्वामी जी के प्रति द्वेष इतना बढ़ा था कि वे उनके (स्वामी जी) नाम से ही जलते थे। उनकी पुस्तक जहाँ पाते फाड़ देते थे। मार्गशीर्ष सं० 1939 में उनका छोटा भाई स्वामी जी की कुछ पुस्तकें खरीद लाया। पण्डित जी उन्हें फड़वाना चाहते थे पर उनकी सुन्दरता देखकर उनका मन उन्हें पढ़ने को ललचा गया। मेला चाँदपुर का वृत्तान्त पढ़कर उनकी बुद्धि से अज्ञान का पर्दा उठ गया और वे स्वामी जी की युक्तियों से अत्यन्त प्रभावित हुये। सं० 1940 में आर्यसमाज की स्थापना जब उनके नगर में हुई तो वे उसके सभासद बने और अन्त तक स्वामी जी के प्रति श्रद्धालु बने रहे।

8. कार्तिक शुल्क 12 सं० 1926 तदनुसार 16 नवम्बर 1869 को काशी का प्रसिद्ध शास्त्रार्थ हुआ। विपक्षी पण्डितों ने काशी नरेश की शह पाकर हुल्ला-गुल्ला मचा दिया और "दयानन्दः पराजितः" कहते हुए काशी नरेश सभा से उठ गये। फिर क्या था, सारी सभा अनियन्त्रित हो गयी और स्वामी जी पर ढेले, गोबर, मिट्टी आदि की वर्षा कर दी। सारा आर्यजगत् काशी के तत्कालीन कोतवाल पं० रघुनाथप्रसाद का आभारी है जिन्होंने अपने कर्त्तव्य का पालन कर स्वामीजी की रक्षा की। यद्यपि वह मूर्तिपूजक था, परन्तु था कर्त्तव्यपरायण, न्यायप्रिय। जब स्वामी जी पर गुण्डे ढेले, गोबर, ईंट आदि फेंक रहे थे, तब स्वामी जी ने पं० जवाहरदास उदासी को कहा कि आप निश्चित रहें। ईश्वर मेरे साथ है मेरा कोई कुछ नहीं कर सकता।

9. महाराज वेद विरूद्ध सभी मतों का खण्डन करते थे। उनमें इस्लाम भी था। मुसलमान उनसे चिढ़ गये। एक दिन महाराज अकेले गंगा तट पर बैठे थे कि कुछ मुसलमानों

www.thearyasamaj.org

की टोली टहलते-टहलते स्वामी जी के निकट पहुँच गई। उनमें से एक ने स्वामी जी को पहचान लिया और कहा कि यह वही बाबा है जो दीन इस्लाम के खिलाफ बोला करता है। इस पर दो व्यक्ति आगे आये और महाराज को गलत-बगल से उठाकर गंगा में फेंकने की चेष्टा करने लगे। महाराज उनके दुष्ट संकल्प को जान गये। उन्होंने अपनी दोनों भुजाएँ इस प्रकार चिपका लीं कि दोनों युवकों के हाथ मानो शिकंजे में कस गये। उन दोनों को दबाए ही स्वामी जी गंडक में कूद गये। वे चाहते तो दोनों को जलमग्न कर देते पर दया करके उन्हें छोड़ दिया और स्वयं जल में नीचे-नीचे तैरते बहुत दूर निकल गये। वे दोनों किसी प्रकार जल से बाहर आये और हाथों में ईंट लेकर स्वामी जी के जल से बाहर आने की प्रतीक्षा करने लगे। बहुत देर तक स्वामी जी नहीं आये तो उन्होंने समझा कि बाबा जल में डूब गया और चले गये। स्वामी जी महाराज रात्रि होने पर अपने स्थान पर आ गये।

10. काशी में ही एक दिन एक मनुष्य भोजन लेकर स्वामी जी के पास आया और भक्तिभाव का प्रदर्शन करके स्वामी जी से भोजन करने की प्रार्थना की। स्वामी जी ने कहा मैं तो भोजन कर चुका आप करिये। वह व्यक्ति बोला अच्छा तो पान ही खालों। महाराज ने पान लिया और खोलकर देखा तो व्यक्ति झटपट भाग गया। पीछे ज्ञान हुआ कि पान में विष था। इस घटना का वर्णन स्वामी जी ने अप्रैल 1878 में मुलतान में एक बंग्डाली सज्जन बाबू शरच्चन्द्र चौधरी से भी किया था। स्वामी जी का शरीर बड़ा बलिष्ठ था वे 10-15 गुण्डों के लिए अकेले ही पर्याप्त थे। एक दिन एक गुण्डा स्वामी जी के पीछे चला आ रहा था उसके इरादे अच्छें नहीं थे। स्वामी जी ने पीछे लौटकर हुंकार लगाई तो वह भयभीत होकर भाग गया।

11. मिर्जापुर में बूढ़े महादेव का एक प्रसिद्ध मन्दिर है। उसका पुजारी छोटू गिरि बड़ा हृष्ट-पुष्ट व्यक्ति था। मूर्तिपूजा के कारण वह स्वामी जी से द्वेष करता था। एक दिन वह दुष्ट स्वामी जी के पास आया और उनसे बोला- बच्चा अभी तू कुछ पढ़ा नहीं है कुछ पढ़। वह स्वामी जी से दुष्टता करने लगा और बोला बच्चा हम तेरे गुरु है आज तुझे सब पता चल जायेगा। इस पर स्वामी जी खड़े हो गये और सिरहाने का पत्थर उठाकर बोले मूर्ख मुझे भय दिखाता है यदि मैं ऐसा भयभीत होता तो देश-देश घुमकर कैसे खण्डन करता। इसके बाद जिला मजिस्ट्रेट ने स्वयं ही अथवा किसी सज्जन के अनुरोध पर स्वामी जी की रक्षा के

www.thearyasamaj.org

निमित्त एक व्यक्ति को स्वामी जी के निवास स्थान पर पहरा देने के लिये नियत कर दिया।

12. मिर्जापुर में एक ओझा ठहरा हुआ था। उसने डींग मारी के यदि कोई मुझसे मारण का पुरश्चरण कराये तो इक्कीसवें दिन दयानन्द की मृत्यु हो जायेगी। मूर्ति-पूजकों में मूर्खों की कमी नहीं थी। उनमें से एक धनी सेठ बोला चाहे जितना पैसा लो और पुरच्रण करो। अभी तीन चार दिन ही हुये थे कि दैवयोग से सेठ जी के गले में फोड़ा निकल आया। उसने ऐसा भयंकर रूप धारण कर लिया कि सेठ जी का खाना-पीना, बोलना-चालना दूभर हो गया। सेठ जी की पीड़ा बढ़ रही थी, ओझा जी की कढ़ाई चढ़ रही थी। एक दिन ओझा सेठ जी से बोला कि बलि की सामग्री प्रस्तुत कराओ। इधर मैं बलि दूंगा उधर दयानन्द की गर्दन गिर जायेगी। सेठ जी बोले दयानन्द की गर्दन गिरे या नहीं मेरी जरूर गिर जायेगी तुम पुरश्रचण बन्द करो।

13. छोटू गिरि स्वामी जी से अपमानित होकर लौटा था, उसके मन में द्वेष की ज्वाला जल रही थी। एकदिन उसने दो गुण्डे पुन: स्वामी जी के पास भेजे। स्वामी जी किन्हीं सज्जन से वार्तालाप कर रहे थे। गुण्डे बीच-बीच में व्यंग्य करते रहे व व्यवधान डालते रहे। स्वामी जी ने उन्हें डपटा। वे इतने भयभीत हुये कि उनका मल-मूत्र निकल गया और वे बेहोश हो गये। जल का छीटा देकर उन्हें होश में लाया गया।

14. जब स्वामी जी अनूपशहर में थे तब एक ब्राह्मण ने स्वामी जी के मूत्ति-पूजा खण्डन से रुष्ट होकर उन्हें पान में विष दे दिया। स्वामी जी को पता लगने से न्योली क्रिया द्वारा उसे अपने शरीर से बाहर निकाल दिया एवं स्वस्थ हो गये।

वहाँ के मुसलमान तहसीलदार सैयद मुहम्मद को जो स्वामीजी का भक्त था, इस घटना का पता चला तो उस ब्राह्मण को पकड़कर कैद में डाल दिया। स्वामी जी को जब इस घटना का पता चला तो बोले कि उस ब्राह्मण को छोड़ दो, मैं संसार को कैद कराने नहीं, अपितु कैद से छुड़ाने आया हूँ। क्या ऐसा अनुपम एवं अनुकरणीय उदाहरण आपने अपने जीवन में कहीं दूसरा देखा है?

15. एक दिन स्वामी जी ने अपने पूर्व परिचित भक्त बाबू रजनीकान्त से कहा कि एक दिन जब हम ध्यानावस्थित थे तो एक विपक्षी तलवार लेकर हमारा वध करने आया था परन्तु जब हमने हुंकार किया तो वह उठकर भाग गया।

16. कानपुर में जब स्वामी जी 12 अक्तूबर 1873 को आये तो वहाँ का शहर कोतवाल सुलतान अहमद स्वामी जी के व्याख्यान में बाधक बना। वह नहीं चाहता था कि स्वामी जी

www.thearyasamaj.org

के व्याख्यान हों। उसके बढ़ावा देने पर मौलवी अण्ड-बण्ड बकने लगे। पण्डितों ने ईंट-पत्थर फेंककर स्वामी जी के प्राणहरण की चेष्टा की। इसमें कोतवाल का पूरा हाथ था, परन्तु तभी अंग्रेज पुलिस कप्तान वहाँ आ गये और आदेश दिया कि स्वामी जी के व्याख्यान यथापूर्व चलेंगे। हम स्वयं उपस्थित रहेंगे। ऐसा प्रतीत होता है कि कोतवाल के कुकृत्य के विषय में पुलिस कप्तान को कुछ सन्देह हो गया।

17. अलीगढ़ में कक भड़ेड़ी साधु महाराज को गाली देने लगा। स्वामी जी ने पूछा गले में क्या पहने हो। उसने कहा रुद्राक्ष है। स्वामी जी ने कहा क्या तुम रुद्र की आँखें निकाल लाये हो। वह निरक्षर भट्टाचार्य क्या समझता कि रुद्राक्ष का क्या अर्थ है, क्रोध में भरकर महाराज को गालियाँ देता रहा। कुछ देर बक झक कर चला गया।

18. वृन्दावन में एक मुंशी हरगोविन्द कट्टर हिन्दू था वह उद्धत एवं झगड़ालु प्रवृत्ति का था। एक बार वह गोरे फौजियों से भी लड़ पड़ा था। उसने स्वामी जी के ऊपर खूब धूल डाली। स्वामी जी की सहनशीलता देखिये उन्होंने उसे कुछ नहीं कहा।

19. वृन्दावन में ही एक वैरागी ने स्वामी जी के प्राणहरण के लिये कुछ गुण्डों को 1000/- का लालच देकर यह कुकर्म करवाना चाहा, परन्तु सफल नहीं हुआ।

20. मथुरा में पं० देवीप्रसाद डिप्टी कलेक्टर ने स्वामी जी से कहा कि आप आज ठहर जाइये आज शास्त्रार्थ होगा। स्वामीजी ठहर गये। शास्त्रार्थ तो नहीं हुआ हाँ, चार-पाँच सौ चौबे लाठियाँ लेकर स्वामी जी को मारने आये। हल्ला सुनकर ठाकुर भूपालसिंह रिसालदार घबरा गये। उन्होंने उस बाग का फाटक बन्द कर दिया जहाँ स्वामी जी ठहरे थे, परन्तु स्वामी जी तनिक भी नहीं घबराये। स्वामी जी के अनुयायी क्षत्रियगण भी संयोग से तभी आ गये। किसी भी चौबे का भीतर घुसने का साहस नहीं हुआ। पण्डित देवीप्रसाद के आने पर तो सभी भाग गये।

21. स्वामी जी के मुम्बई प्रवास (दिसम्बर 1874) के दौरान बल्लभ सम्प्रदाय के लोग स्वामी जी के परम-शत्रु हो गये थे। एक दिन गोस्वामी जी ने स्वामी जी के पाचक बलदेव को बुलाकर कहा कि तुम स्वामी जी की हत्या कर दो तो हम तुम्हें 1000/- रुपये देंगे। उसे तुरन्त पाँच रुपये और पाँच सेर मिठाई दे दी और 1000/- रुपये का रुक्का लिख दिया। अभी बलदेव जीवनी गुसाई के पास ही खड़ा था, किसी ने स्वामी जी को सूचना दी कि आपका पाचक जीवनी के पास खड़ा है। जब वह

www.thearyasamaj.org

लौटकर आया तो स्वामी जी ने सारा वृतान्त पूछा। पाचक ने सब बातें सत्य-सत्य बता दी स्वामी जी ने कहा कि मुझे कई बार विष दिया है तैं मरा नहीं अब भी नहीं मरूँगा। बलदेव ने क्षमा माँग ली। स्वामी जी ने मिठाई फिंकवा दी, चिट्ठी फड़वा दी और भविष्य में उनके यहाँ न जाने की हिदायत दी।

22. इसी प्रसंग में एक दिन गोकुलिये गुसाइयों ने अपने अनुनायी कच्छी बनियों की बीस मनुष्यों की टोली स्वामी जी को पीटने के उद्देश्य से बालकेश्वर भेजी, परन्तु वे सफल नहीं हो सके।

23. कुछ दुष्टों ने स्वामी जी के वध के लिये घातकों को तय किया। वे बालकेश्वर में मौके की तलाश में रहते थे। स्वामी जी बलदेव को साथ लेकर समुद्र तट पर टहलने जाया करते थे। घातक लोग स्वामी जी का पीछा करते थे। एक दिन स्वामी जी की उनसे मुठभेड़ हो गई। स्वामी जी ने कहा कहो क्या इरादा है तुम हमें मारना चाहते हो। उत्तर में वे कुछ नहीं बोले और उन्होंने इसके बाद स्वामी जी का पीछा करना छोड़ दिया। स्वामी जी पूर्ववत् उसी सड़क पर टहलने जाते रहे।

24 बल्लभ सम्प्रदाय वालों ने एक बार पुनः स्वामी जी के वध का यत्न किया। उन्होंने दो गुण्डों को दो सौ रुपये दिये। एक दिन वे दोनों रात्रि के समय स्वामी जी के कमरे में घुस गये। उस समय सेठ सेवकलाल स्वामी जी के पास बैठे थे। उन्होंने घातकों को पकड़ लिया। पूछने पर उन्होंने स्वीकार किया कि उन्हें स्वामी जी के वध के लिये दौ सौ रुपये दिये गये थे।

25 स्वामी जी के सूरत प्रवास में पण्डित इच्छाशंकर और कुछ अन्य शास्त्री स्वामीजी से शास्त्रार्थ करने के अभिप्राय से आगे आये, परन्तु स्वामी जी ने उन्हें निरुत्तर कर दिया। इतने में अन्धेरा होने लगा। सभा में दो-चार ईंटें आकर गिरीं। यह सब गोलाभाई एवं कुछ दुष्ट प्रवृत्ति के लोगों ने स्वामी जी को अपमानित करने का संकल्प किया था और उनकी योजना से ही ईंटें फेंकी गई थीं।

26. मुरादाबाद में नवम्बर 1876 ई० में स्वामी जी का मूर्तिपूजा खण्डन पर व्याख्यान सुनकर एक टीका नामक ब्राह्मण इतना आवेश में आया कि स्वामी जी को गाली देने लगा और यह कहता हुआ कि यह दुष्ट हमारे देवताओं की निन्दा करता है, इसका मुख भी नहीं देखना चाहिए, चला गया। स्वामी जी ने उसकी गालियों पर कोई भी ध्यान नहीं दिया।

27. मार्च 1877 ई० में चाँदापुर में स्वामी जी ने बख्शीराम व मुंशी इन्द्रमणि को एक

www.thearyasamaj.org

आपबीती व्यथा सुनाई थी। जब स्वामी जी एकाकी घूमते थे तो एक बार वे ऐसे स्थान पर पहुँच गये जहाँ सब शाक्त बसते थे। उन्होंने स्वामी जी की बड़ी सेवा-सुश्रुषा की। कई दिन के बाद जब स्वामी जी चलने को हुये तो उन्हें आग्रहपूर्वक ठहरा लिया गया। स्वामी जी ने समझा ये ऐसा भक्तिभाव से कर रहे है।

एक दिन उनका पर्व आया। उस दिन सब लोग मन्दिर में गये। स्वामी जी को साथ ले गये। स्वामी जी की बहुत अनुनय-विनय की कि आप हमारे मन्दिर में चलो चाहे मूर्ति को नमस्कार मत करना। वह मन्दिर नगर से बाहर उजाड़ स्थान पर था। स्वामी जी जब मन्दिर में गये तो वहाँ एक बलिष्ठ व्यक्ति नंगी तलवार हाथ में लिये खड़ा देखा। मन्दिर का पुजारी स्वामी जी से बोला कि महात्मा जी दुर्गा माता के सामने शीश झुकाकर नमस्कार करो। स्वामी जी मना करने पर पुजारी बलपूर्वक स्वामी जी की गर्दन झुकाने लगा। स्वामी जी उसके बर्ताव पर चौंके और समझ गये कि दाल में कुछ काला है। उन्होंने झपटकर उस व्यक्ति से तलवार छीन ली, पुजारी को धक्का दिया तो वह मन्दिर की दीवार से जा लगा। स्वामी जी जब बाहर आये तो देखा कि मन्दिर के आंगन में लोग छुरी-कुल्हाड़ी आदि शस्त्र लेकर स्वामी जी पर टूट पड़े। द्वार पर ताला लगा हुआ था। स्वामी जी उछलकर दीवार पर चढ़ गये और कूदकर भाग निकले। दिनभर किसी सुरक्षित स्थान पर छिपे रहे। रात होने पर बचते-बचते किसी ग्राम में पहुँचे। उस दिन से स्वामी जी ने शाक्त लोगों पर कभी विश्वास नहीं किया।

28. काशी प्रवास के दौरान स्वामी जी एक पर्णकुटी में निवास करते थे। समीप ही कुछ साधुओं का भी डेरा था। वे साधु स्वामी जी से अकारण ही वैर रखते थे। एक दिन रात्रि के घोर अन्धकार में वे लोग स्वामी जी की पर्णकुटी के पास आये और स्वामी जी का वध करने का परामर्श करने लगे। स्वामी जी ने उनकी बातें सुन ली। थोड़ी देर बाद उन लोगों ने कुटिया को आग लगा दी। जब वह जलने लगी तो स्वामी जी छप्पर उठाकर बाहर निकल आये।

29. पान में विष- एक दिन स्वामी जी महाराज काशी में व्याख्यान दे रहे थे कि एक ब्राह्मण ने उन्हें पान लाकर दिया। उन्होंने सरल स्वभाव से लेकर खा लिया। खाते ही उन्हें ज्ञात हुआ कि पान में विष था। तब उन्होंने वमन द्वारा विष को शरीर से बाहर निकाला। दयानन्द प्रकाश के अनुसार उपरोक्त दोनों घटनाएँ स्वामी जी ने लाहौर में डॉक्टर रहीम खाँ की कोठी में लोगों को सुनाई थीं।

www.thearyasamaj.org

30. 13 जनवरी 1878 ई० को स्वामी जी पंजाब राज्य के गुजराल शहर में पहुँचे। यहाँ एक नामी बदमाश जिसे लोग "अन्धी का पुत्तर" (अन्धी का पुत्र) कहते थे। स्वामी जी को बहुत अपशब्द कहता था। वह खुल्लम-खुल्ला कहता था कि मैं या तो दयानन्द को मार डालूँगा या उसकी नाक काट लूँगा। वह स्वामी जी पर बड़े अनर्गल आरोप लगता था। पुलिस ने भी उसे डाँटा नहीं। मेहता ज्ञानचन्द और उनके साथियों को भय था कि कहीं वह दुष्ट स्वामी जी का कुछ अनिष्ट न कर दें। अतः स्वामी जी को उन्होंने सावधान किया। स्वामी जी ने कहा तुम मेरा सोटा देखते हो मुझ पर कोई आक्रमण नहीं कर सकता। मैं अकेला दस-बारह व्यक्तियों पर भारी हूँ। एक दिन स्वामी जी महाराज व्याख्यान दे रहे थे। व्याख्यान के दौरान ही कुछ ईंटें मेज पर आकर गिरीं। स्वामी जी किञ्चित् भी विचलित न हुये और व्याख्यान देते रहे। व्याख्यान की समाप्ति पर अपने स्थान पर लौट आये।

31. एक दिन एक मनुष्य ने महाराज को ईंट मारी, परन्तु वे स्वामी जी को लगी नहीं। पुलिसमैन उसको पकड़ लाया। उसने ईंट फेंकने से मनाही की। स्वामी जी ने उसे क्षमा किया। स्वामी जी ने कहा कि हमारे साथ यह कोई घटना नहीं है। ऐसे लोगों को क्षमा कर दो और इन्हें सदुपदेश दो।

32. फरवरी 1878 में स्वामी जी महाराज वजीराबाद में प्रवचन कर रहे थे। वहाँ पण्डित बासदेव ने एक मन्त्र बोला जिसमें शालिग्राम व तुलसी की पूजा सिद्ध होती है। स्वामी जी ने कहा यह वेद का मन्त्र नहीं है, यह किसी मन्त्र की टीका है। स्वामी जी ने मूल मन्त्र प्रस्तुत करने को कहा। वहाँ भीड़ बढ़ गई और उपद्रव की आशंका बढ़ गई। वहाँ पण्डित रामचन्द्र आनरेरी मजिस्ट्रेट भी उपस्थित थे। तब तक तो शान्ति रही। पर उनके किसी काम से जाने के बाद एक लड़के ने कुछ शोर करना शुरू कर दिया। स्वामी जी ने कहा कि इस लड़के को चुप कराओ। इस पर लाला लब्धाराम साहनी अप्रेन्टिस इन्जीनियर ने उस लड़के को एक-दो छड़ी मार दीं। पौराणिक खीजे तो बैठे ही थे उन्हें मौका मिल गया। उन्होंने लब्धाराम पर आक्रमण कर दिया। आर्यसमाज वजीराबाद तथा आर्यसमाज जेहलम के सभासदों ने जो वहाँ उपस्थित थे उनकी रक्षा की। स्वामी जी व लाला जी को उनके निवास स्थान पर पहुँचा दिया और वहाँ द्वार बन्द कर दिये, परन्तु भीड़ हटी नहीं और शोर मचाती रही। स्वामी जी के हिन्दुस्तानी क्लर्क को आवेश आया तो वह

www.thearyasamaj.org

लाठी लेकर भीड़ में चला गया। पर सैकड़ों लोगों के बीच में अकेले व्यक्ति की पार ही क्या पड़ती। लोगों ने उसे खूब पीटा।

स्वामी जी को जब यह पता चला तो स्वयं लाठी लेकर बाहर आये और जोर से गर्जना करके लोगों को भगा दिया। फिर स्वामी जी वहाँ से 8 फरवरी को गुजरानवाला चले गये।

33. 18 जून 1878 ई० को अमृतसर में शास्त्रार्थ के आयोजन के दौरान अचानक चिल्लपौ मचने लगी। सभास्थल पर ईंट रोड़ों को फेंका जाने लगा। एक रोड़ा स्वामीजी महाराज को भी मारा गया, परन्तु वे किसी प्रकार बच गये अन्य लोग घायल हुये उनके शरीर से रक्त बहने लगा। पुलिस खड़ी देखती रही उसने न किसी को रोका न किसी को पकड़ा। बड़ी कठिनाई से उपद्रव शान्त हुआ।

34. अमृतसर में ही एकदिन एक भंग्ड़ी ब्राह्मण ने स्वामीजी के उपदेशों से चिढ़कर सोटा मारना चाहा। लोगों ने उसे पकड़ लिया। स्वामीजी ने उसे छुड़वा दिया।

35. 29 सितम्बर 1878 को मेरठ में आर्यसमाज की स्थापना स्वामी जी के कर-कमलों द्वार हुई। स्वामी जी के व्याख्यान शहर में लाला रामशरनदास के मकान पर हुआ करते थे। मेरठ छावनी का एक सेठ महाराज का इतना विरोधी हो गया था कि उसने उन्हें पीटने के लिये कुछ गूजरों को तैयार कर लिया, परन्तु वह कुछ नहीं कर पाया। पर महाराज के श्राद्ध खण्डन के व्याख्यान से ब्राह्मण व महाब्राह्मण बहुत चिढ़ गये। उन्होंने कुछ गुण्डों को तैयार किया कि जब रात्रि में व्याख्यान की समाप्ति पर स्वामी जी अपने डेरे पर जाये, उन्हें लाठियों से पीटा जाये। यह पता लगने पर स्वामी जी उसी गली में होकर गये। दुष्ट लोग लाठियाँ लिये बैठे के बैठे ही रह गये और किसी का भी स्वामी जी पर आक्रमण करने का साहस नहीं हुआ।

36. अप्रैल 1879 में स्वामी जी हरिद्वार में व्याख्यान दे रहे थे कि ज्वालापुर निवासी एक बूढ़े ब्राह्मण को बड़ा क्रोध आया और वह खड़ा होकर बोला कि स्वामी। जी में आता है तेरा गला काट लूँ और फिर अपना भी काट लूँ। तूने हमें बड़ी हानि पहुँचाई है। हमारी जीविका मार दी है। पहरेदार ने उसे वहाँ से हटा दिया।

37. वैशाख वदि 1 सं० 1936 को कुछ पण्डितों ने स्वामी जी को स्वास्थान पर हरिद्वार में शास्त्रार्थ के लिये निमन्त्रित किया और योजना यह बनाई कि यदि दयानन्द यहाँ आये तो उसका सिर फोड़ दो। स्वामी जी ने उत्तर दिया कि मैं शास्त्रार्थ के लिये हर समय तैयार हूँ, परन्तु इसका प्रबन्ध कोई राजपुरुष करे।

जूनागढ़ अखाड़े में जाने पर मुझे शारीरिक हानि की अशंका है। उनके कई पत्र आये पर स्वामी जी इसी बात पर डटे रहे और गये नहीं।

38. स्वामी जी के पास शिवराम नाम का एक पण्डित रहता था, उसके श्वसुर और चाचा आदि को यह भय था कि कहीं शिवराम स्वामी जी की संगत में रहकर संन्यासी न हो जाय। अतः उन्होंने शिवराम को पत्र लिखा कि तुम घर लौट आओ और यदि दयानन्द तुम्हें छुट्टी नहीं देगा तो हम उसका सिर काट लेंगे? शिवराम ने वह पत्र स्वामी जी को दिखाया। स्वामी जी ने कहा तुम हमारी चिन्ता छोड़ो पर तुम्हारी इच्छा हो तो चले जाओं। उस समय स्वामी जी के पास कोई अन्य पण्डित नहीं था।

39. एक दिन महाराज श्राद्ध खण्डन कर रहे थे। कुछ दुष्टों ने उन पर ढेले फेंके, परन्तु स्वामी जी तनिक भी विचलित नहीं हुये और व्याख्यान देते रहे।

40. एक दिन एक मुसलमान युवक आया उसने कुछ प्रश्न किये, अण्ड-बण्ड बकता रहा। महाराज शान्त रहे, वह दुष्ट बकता ही रहा और फिर चला गया।

41. मैडम ब्लेवेट्स्की ने अपनी पुस्तक "From the cawes and inungls of hindustan" में लिखा है कि एक बार महाराज बंगाल में एक छोटे से ग्राम में शैवमत का खण्डन कर रहे थे। शैव ने काला नाग स्वामी जी के निर्वस्त्र पैरों पर फेंका और कहा कि अब वासुकी देवता स्वयं ही प्रकट कर देगा कि कौन सच्चा है। सर्प उनकी टाँग पर लिपट गया। स्वामी जी ने झटके से उसे फेंककर अपनी एड़ी से कुचल डाला और शैव से कहा कि तुम्हारा देवता तो शिथिल रहा, मैंने ही इस विवाद का निर्णय कर दिया।

42. स्वामी जी ने एक बार मौलवी इमदाद हुसैन को बताया था कि एक दिन मैं (स्वामी जी) शौच करने बैठा था कि एक मनुष्य नंगी तलवार लिये मेरे पीछे आ खड़ा हुआ। मैंने उससे कहा मैं शौच से निवृत्त हो लूँ तब मेरा सिर काट डालना। इस पर व राजी हो गया। जब मैं निवृत्त हो गया तब मैंने अपनी गर्दन उसके आगे झुका दी। इससे वह इतना प्रभावित हुआ कि बिना कुछ कह ही मुझे छोड़कर चला गया।

43. 19 अगस्त से 8 सितम्बर 1889 तक स्वामी जी रायपुर में थे। वहाँ के ठाकुर हरिसिंह जब स्वामी जी से मिलने आये तो स्वामी जी ने पूछा कि आपका मन्त्री कौन है? ठाकुर के यह बताने पर कि शेखबख्श इलाही है। स्वामी जी ने कहा कि आर्यपुरुषों को उचित है कि यवनों को राजमन्त्री न बनाएं ये तो दासीपुत्र हैं। इसे सुनकर

www.thearyasamaj.org

शेख का भतीजा करीमबख्श और अन्य 5-7 मुसलमान क्रोधित हो गये और स्वामी जी को पीटने का षड्यन्त्र करने लगे। बाद में स्वामी जी द्वारा स्पष्टीकरण देने पर यह मामला शान्त हो गया।

44. 29 सितम्बर 1883 को स्वामी जी को जोधपुर में रात्रि के समय स्वामी जी के रसोइये धौड़ मिश्र ने स्वामी जी को दूध में विष मिलाकर दे दिया। वह विष स्वामी जी के लिये प्राणघातक सिद्ध हुआ।

अन्ततः महर्षि दयानन्द 30 अक्तूबर 1883 मंगलवार को प्रभु की इच्छा व्यवस्था के अनुसार महाप्रयाण कर गये।

भव्य सत्यार्थ प्रकाश महोत्सव

26,27,28 दिसम्बर, 2013

D.A.V. स्कूल आरा में

आमंत्रित विद्वान- वेद प्रकाश दिल्ली

सारस्वत मोहन मनीषी, दिल्ली

आचार्या- लक्ष्मी भारती, हरियाणा

वेद प्रचार महोत्सव सम्पन्न

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के मार्गदर्शन में, आर्य समाज बाँकीपुर, नयाटोला, पटना के द्वारा 22 से 28 अगस्त 2013 तक भव्य वेद प्रचार महोत्सव का आयोजन सभा प्रांगण में किया गया। जिसमें आर्यजगत के उद्भट्ट विद्वान् आचार्य ब्रह्मदत्त जी के वेदोपदेश एवं पं० दयानन्द सत्यार्थी जी के भजनोपदेश ने वातावरण को वेदमय बना दिया। वर्षों बाद हुए इस आयोजन से नगर वासियों में सुखद संचार हुआ। लोगों ने इस महोत्सव की भूरी-भूरी प्रशंसा की। आर्य विद्वानों ने सब आर्य समाज के कार्यक्रम की रूप रेखा प्रस्तुत की तो श्रोताओं ने इसे स्वीकार करने का संकल्प लिया।

इस कार्यक्रम में सभा प्रधान श्री गंगा प्रसाद जी सभा मंत्री श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता जी आर्य समाज, बांकीपुर के प्रधान श्री बलराम पटेल जी, मंत्री श्री अरूण कुमार सिन्हा उर्फ माईकल श्री साहनी जी, श्री पुरूषोत्तम जी के अलावे अनेक गणमान्य लोगों ने भाग लिया।

www.thearyasamaj.org

इतना बड़ा अमीर था

सारस्वत मोहन मनीषी, दिल्ली

वेद-सिन्धु का तीर थ।
संयम की जंजीर था।
मानवता के माथे पर ऋषि चन्दन और अबीर थ।
पिता तिवारी कर्षन जी ओ' पुण्य-पुनीता माता ने।
पुत्ररत्न को जन्म दिया रक्षक भेजा जग त्राता ने।
टंकारा गुजरात भूमि की कोख सुहागिन क्या कहना।
नगर मौरवी की धरती पर भेजा दूत विधाता ने।
पुष्प नहीं, मधुमास था।
पृष्ठ नहीं इतिहास था।
अंबर से उदार, सागर से भी गहरा-गंभीर था।
वेद-सिन्धु का तीर था, संयम की जंजीर था।
यौवन और किशोर अवस्था का संगम कुछ न्यारा है।
जीवन लेता दिशा यहीं से अनुचित-उचित विचारा है।
इसमें व्यक्ति बिगड़ता-बनता संशय की कुछ बात नहीं।
निर्देशक हो कुशल, नाव को मिलता तुरन्त किनारा है।
गुरुवर विरजानन्द थे।
स्वयं दया, आनन्द थे।
देखा-सुना, हुआ ना होगा अद्भुत एक फकीर था।
वेद-सिन्धु का तीर था, संयम की जंजीर था।
गुरुवर के निर्देशन में अंतस्थ किया निगमागम को।
ज्ञान सिंधु पी लिया विन्दु सम दुलराया हर शबनम को।
होकर योगारूढ़ विश्व की दुखी आत्मा में झांका,
सभी ऐषणाओं को त्यागा राग-द्वेष की सरगम को।
दृश्यमान वह ज्ञान था।
संस्कृति का सम्मान था।
भारतीय उत्तमतम भावों की अक्षय जागीर था।
वेद-सिन्धु का तीर था, संयम की जंजीर था।
निर्विकार संयम की ऋषि तो स्वयं एक परिभाषा था।
हर लावारिस आंसू की खातिर वह तो एक दिलासा था।।
दया क्षमा मित्रता भाव की पावन पुण्य त्रिवेणी था।
अधिक कहूं क्या भारतीय गूंगे भावों की भाषा था।
वर्त, भविष्य, अतीत था।
बिना शब्द का गीत था।
सत्यं, शिवं, सुन्दरं की जीवित अनुपम तस्वीर था।
वेद-सिन्धु का तीर था, संयम की जंजीर था।
ओ३म्-पताका ले कर में पाखण्ड खण्डनी गाड़ चला।
भ्रम के भूत असत भावों के झण्डे सभी उखाड़ चला।
वेद सत्य विद्याओं का पुस्तक है, ऐसा घोष किया।
पोंगा पन्थ, पुराण प्रथाएं, पंकिल प्रश्न, पछाड़ चला।
वैदिक विश्व विजेता था।
सतयुग द्वापर त्रेता था।
हंसी बेच आंसू खरीदता इतना बड़ा अमीर था।
वेद-सिन्धु का तीर था, संयम की जंजीर था।
ऋषि जीवन की मर्यादाएं अन्त समय तक सब पा ली।
वीर प्रसविनी माटी में कर गया देह-पिंजरा खाली।
श्रद्धावान सुभद्र 'मनीषी' आंखें गंगा बन उमड़ीं।
एक दीप बुझकर दे पाया हमको अनगिन दीवाली।
सोम सिन्धु विक्रेता था।
बिन कुर्सी का नेता था।
ज्यों की त्यों घर चला चदरिया उतरा शुद्ध कबीर था।
सच कहता हूं देव दयानन्द दुनिया की तकदीर था।

करो वेद प्रचार अमृत बरसेगा।।

www.thearyasamaj.org

सदानन्द मुनि का निधन

आर्य समाज मुसाढ़ी पो०, हिलसा (नालंदा के स्वामी सदानन्द मुनि का स्वर्गवास दिनांक: 12.08.2013 को हो गया। जिनका अन्त्येष्टि संस्कार वैदिक रीति से श्री शिव बालक सिंहा मंत्री के ब्रह्मत्व में एवं सहयोग श्री विनोद कुमार शास्त्री द्वारा कराया गया।

दिनांक: 13.08.2013 से 15.08.2013 तक उनके घर पर मंत्री शिव बालक सिंहा के आचार्यत्व में एवं स्वामी मुनि के एकमात्र पुत्र श्री इन्द्रभूषण पटेल के द्वारा सभा के सभी सदस्यों एवं परिवार के सदस्यों की उपस्थिति में शान्ति यज्ञ कराया गया।

नालन्दा जिला आर्य सभा के पदाधिकारियों का चुनाव

संरक्षक:– श्री सतीशचन्द्र प्रसाद सोहसराय,

प्रधान:– श्री प्रमोद कुमार, आर्य
बिहार शरीफ।

उपप्रधान:– श्री कृष्णचन्द्र आर्य, राजगीर,
श्री बेदव्यास वेदालंकार
बिहार शरीफ।
श्री धर्मेन्द्र सिंह आर्य, हिलसा।

मंत्री:– श्री कामता प्रसाद, राणाविद्या।

उपमंत्री:– श्री प्रो० सत्येन्द्र कुमार, मुसाढ़ी।
श्री अशोक कुमार आर्य
बिहार शरीफ।
श्री भोला पहाड़ी, बिहार शरीफ।
श्री अजय कुमार आर्य, राजगीर।

कोषाध्यक्ष:– श्री विमलचन्द्र प्रसाद
बिहार शरीफ।

मंत्री, कामता प्रसाद
नालन्दा जिला, आर्य सभा
प्रधान कार्यालय, आर्यसमाज, मंदिर

www.thearyasamaj.org

वेद प्रचार महोत्सव सम्पन्न

आर्य समाज के द्वारा आयोजित तुर्कबन्द (धमौल क्षेत्र) में श्रावणी उपाकर्म वेद प्रचार के अवसर पर त्रिदिवसीय वेद कथा का भव्य आयोजन किया गया। इस अवसर पर वैदिक विद्वान पं० संजय सत्यार्थी उपमंत्री बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा पटना एवं आचार्य ज्ञानेन्द्र शास्त्री धर्माचार्य (योगाचार्य) समस्तीपुर से पधारें। अपने ओजस्वी क्रान्तिकारी उद्‌बोधन में श्री सत्यार्थी जी ने लोगों को बताया कि वेद परम पिता परमात्मा का अमर संदेश एवं सृष्टि का संविधान है। वेदों को अपने जीवन में अपनाकर ही लोग सुख शान्ति एवं समृद्धि प्राप्त कर सकते हैं। आर्य समाज एक आन्दोलन है और इस आन्दोलन के साथ जुड़ने वाला व्यक्ति ही सच्चा राष्ट्र भक्त बन सकता है। उन्होंने यह भी संदेश दिया कि महर्षि दयानन्द जी द्वारा रचित अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश और व्यवहार भानु का स्वाध्याय करने से जीवन में अमूल परिवर्तन आएगा। श्री सत्यार्थी जी जन्माष्टमी के अवसर पर श्री कृष्ण के चरित्र व कृतित्व पर प्रकाश डालते हुए बताये कि योगी राज श्री कृष्ण एक आप्त पुरुष थे जिन्होंने जीवन पर्यन्त कोई भी गलत कार्य नहीं किया। भागवतकार ने श्री कृष्ण को चोर, छलिया व चूड़ी बेचनेवाला आदि-आदि आलोचना लगाकर उनके चरित्र पर कीचड़ उछालने का काम कर रहे हैं। आचार्य ज्ञानेन्द्र शास्त्री जी ने बताया कि भगवान श्री कृष्ण व भगवान राम वेदों के विद्वान थे। यजुर्वेद का चालीसवाँ अध्याय ही सम्पूर्ण गीता है। इससे पता चलता है कि श्री कृष्ण चन्द्र वेदों के विद्वान थे। आचार्य जी ने यह भी बताया कि अगर व्यक्ति जीवन में सुख को प्राप्त करना चाहते हैं तो घर-घर में पञ्चमहायज्ञ, ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, वलिवैश्वदेव यज्ञ एवं अतिथि यज्ञ करना चाहिए। जहाँ वेद पढ़ा जाए व हवन किया जाए ऐसे परिवार को ही स्वर्ग कहा जाए।

स्थानीय श्री दयानन्द आर्य श्री रवीन्द्र आर्य श्री राम विलास आर्य एवं श्री रणवीर राणा जी का विशेष योगदान रहा। पारिवारिक यज्ञ का आयोजन भी किया गया। आचार्य ज्ञानेन्द्र जी ने यह भी बताया कि वेद माता, गौ माता, जननी माता, धरती माता का सम्मान होना चाहिए।

शान्ति पाठ एवं प्रसाद वितरण एवं धन्यवाद ज्ञापन के साथ कार्यक्रम सम्पन्न हुआ।

●

www.thearyasamaj.org

नवादा जिला आर्य सभा

नवादा जिला आर्य सभा का त्रैवार्षिक निर्वाचन सह अधिवेशन आर्य समाज नेमदारगंज (नवादा) के प्रांगण में मगध प्रमण्डल के प्रधान श्री वागीन्द्र आर्य जी के पर्यवेक्षण एवं सभापतित्व में सोल्लास (पूर्वक) सम्पन्न हुआ जिसमें नवादा नगर, रजौली, कौआकोल, कादिरगंज, धमौल, अकबरपुर, नेमदारगंज आर्य समाज के सदस्य एवं प्रतिनिधि सम्मिलित हुये:—

निर्वाचन निम्नलिखित प्रकार हुआ:—

1. प्रधान— श्री राम प्यारे प्रसाद, रजौली
2. उप प्रधान— श्री अश्विनी कुमार, नेमदारगंज
3. उप प्रधान— श्री जगदीश आर्य, नवादा
4. मन्त्री— श्री विजय कुमार आर्य, नवादा
5. उपमन्त्री— श्री मथुरा प्रसाद आर्य, कादिरगंज
6. उपमन्त्री— श्री सुनील कुमार, नेमदारगंज
7. कोषाध्यक्ष— श्री युगल नारायण आर्य, कौआकोल
8. प्रचार मन्त्री— श्री सन्त शरण आर्य, नेमदारगंज

नव निर्वाचन.अधिकारियों ने सजगता से उत्तरदायित्व वहन करने की घोषणा की और धन्यवाद ज्ञापित किया। बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा पटना के उपमन्त्री श्री संजय सत्यार्थी सबका स्वागत किये।

विजय कुमार आर्य, मंत्री
नवादा जिला आर्य सभा

महर्षि दयानन्द जन्म स्थान टंकारा में बोधोत्सव का आयोजन

आर्य जनों को यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता होगी कि प्रतिवर्ष की भांति आगामी वर्ष में महर्षि दयानन्द जन्म स्थान टंकारा में शिवरात्रि के पावन पर्व पर भव्य ऋषि बोधोत्सव का आयोजन बुधवार, वीरवार, शुक्रवार, 26,27,28 फरवरी 2014 को किया जायेगा। आपसे निवेदन है कि आप यह तिथियों अभी से अंकित कर लेवें और इन तिथियों में अपनी आर्य समाज एवं अपनी संस्था का कोई कार्यक्रम न रखकर उक्त समारोह में अधिक से अधिक आर्य जनों के साथ टंकारा पधारने का कार्यक्रम बनायें। आपके आवास एवं भोजन की व्यवस्था टंकारा ट्रस्ट की ओर से होगी।

आवश्यकता है

महर्षि दयानन्द जन्मभूमि टंकारा में चल रहे महर्षि दयानन्द सरस्वती अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक महाविद्यालय में ऐसे उपाचार्य की आवश्यक्ता है जो काशिका तथा महाभाष्य एवं निरूक्तादि पढ़ाने में सक्षम हो। योग्यतानुसार वेतन एवं आवास—भोजनादि की सुविधा विद्यालय में दी जायेगी। नीचे लिखे पते पर प्रमाण—पत्र, अनुभव तथा पासपोर्ट साईज की फोटो के साथ आवेदन पत्र भेजें।

रामदेव शास्त्री, आचार्य, महर्षि दयानन्द सरस्वती अन्तर्राष्ट्रीय उपदेशक महाविद्यालय, टंकारा, जिला राजकोट, गुजरात—363659
फोन नं0— 02822—287756
मो0 09913251448

www.thearyasamaj.org

परोपकारिणी सभा, अजमेर के तत्त्वाधान में 130 वां ऋषि बलिदान समारोह

महापुरूषों का यज्ञमय जीवन हमको प्रत्येक कदम पर प्रेरणा व मार्गदर्शन देता रहता है। जिसके कारण हम उनके ऋणी हो जाते हैं। इस ऋण से मुक्त होने का एक ही उपाय है– महापुरूषों की विचारधारा का यथासामर्थ्य प्रचार–प्रसार। विराट व्यक्तित्त्व महर्षि दयानन्द की समग्र मानव जाति ऋणी है। इस ऋण को चुकाने का स्वर्ण–अवसर ऋषि के 130 वें बलिदान वर्ष के उपलक्ष्य में हमको प्राप्त हुआ है। इस अवसर पर परोपकारिणी सभा भव्य समारोह का आयोजन करने जा रही है।

ऋग्वेद पारायण यज्ञ- 6 नवम्बर 2013 से 'ऋग्वेद परायण यज्ञ' का आरम्भ किया जायेगा, इस यज्ञ की पूर्णाहूति बलिदान समारोह के अंतिम दिन 10 नवम्बर 2013 को होगी। यज्ञ के **ब्रह्मा डॉ. कमलेश शास्त्री** होंगे। यह यज्ञ ऋषि–उद्यान, अजमेर की यज्ञशाला में होगा।

वेदगोष्ठी- प्रतिवर्ष की परंपरा के अनुसार इस वर्ष भी संयुक्त प्रयास से संपन्न होने वाली वेदगोष्ठी का आयोजन किया गया है। इस गोष्ठी में देश के अनेक विद्वान् अपने शोधपूर्ण मौलिक विचार प्रस्तुत करेंगे। इस वर्ष वेदगोष्ठी का विचारणीय बिन्दु है- **वेद और सत्यार्थप्रकाश 12 वाँ समुल्लास।** जो विद्वान गोष्ठी में शोधपत्र प्रेषित करना चाहते हैं वे 15 अक्टूबर तक सभा के पते पर प्रेषित करवा देवें। 8–10 नवम्बर को ऋषि बलिदान समारोह के कार्यक्रमों के साथ-साथ वेदगोष्ठी भी चलती रहेगी। ऋषि-भक्त इसे सुनने का लाभ उठा सकते हैं।

चतुर्वेद कण्ठस्थीकरण वेद प्रतियोगिता- प्रतिवर्ष आयोजित की जाने वाली इस प्रतियोगिता में 21 वर्ष तक के छात्र भाग ले सकते हैं। किसी भी वेद को आद्योपान्त स्मरण करके इस प्रतियोगिता में भाग लिया जा सकता है। जो छात्र जिस वेद पर गतवर्षों में पारितोषिक ग्रहण कर चुके हैं, वे उस वेद से अतिरिक्त वेद स्मरण करके भाग ले सकते हैं। 8 नवम्बर को परीक्षा एवं 9 नवम्बर को पुरस्कार-वितरण का कार्यक्रम होगा। जो छात्र इस प्रतियोगिता में भाग लेना चाहते हैं, वे अपने-अपने गुरुकुलों, आश्रमों, संस्थानों से आचार्य द्वारा अधिकृत पत्रक पर 2-छयाचित्र सहित अपना परिचय 15 अक्टूबर, 2013 तक 'आचार्य महर्षि दयानन्द आर्य गुरूकुल, ऋषि-उद्यान, अजमेर' इस पते पर भेज दें।

www.thearyasamaj.org

आर्य समाज ही महर्षि दयानन्द जी का स्मारक हैं-एक चिन्तन

किसी भी महात्मा या पुरूष का सच्चा स्मारक चिन्ह जानने के लिये हमें केवल उसकी मूर्ति बनाकर सार्वजनिक स्थान पर लगा देने से उद्देश्य पूर्ण नहीं होता है। अपितु उसके उपदेश सिद्धान्तों की शिक्षा दी जाये। इस वर्णन में यह सिद्ध है कि सच्चा स्मारक किसी–उद्देश्य की पूर्ति का साधन होता है और इस सिद्धांत को विचरते हुए हम पाते हैं कि आर्य समाज जहां महर्षि दयानन्द के नाम को स्मरण कराने वाला है, वहाँ उसके उद्देश्य की पूर्ति का निश्चय प्रबल और श्रेष्ठ साधन है। महर्षि के उद्देश्यों को पूर्ण करने के लिए आर्य समाज विद्यमान है। चूंकि महर्षि दयानन्द जी ने अपने हाथों से आर्य समाज का बुनियादी पत्थर रखा है, अतः आर्य समाज के अतिरिक्त महर्षि का स्मारक और कोई नहीं हो सकता है। महर्षि ने अपने जीवन में भी पं0 गौरी शंकर शर्मा को वैदिक धर्म सभा जयपुर का वैतनिक उपदेश रख कर वैदिक धर्म के प्रकाश और अविधा अन्धकार को दूर करने का यत्न किया था। आज सारा विश्व आर्य समाज के सिधान्तों से परिचित हैं महर्षि दयानन्द द्वारा लगाया गया वृक्ष आज फल फूल रहा है।

आइए विचार करें? पांच सहस्र वर्ष पूर्व सम्पूर्ण विश्व में केवल वैदिक धर्म था वेदों की मान्यताएँ थी और सम्पूर्ण विश्व में भारत की रिस्तेदारी थी। और सम्पूर्ण विश्व में भारत अध्यात्म का मार्ग दर्शक था। आर्य धर्म व आर्य सभाऐं सम्पूर्ण पृथ्वी पर उपस्थित थी, क्योंकि वेदों में आर्य धर्म सभाओं को नियत करने की आज्ञा है। परन्तु अब समय ऐसा आया है कि आर्य समाज को छोड़ कर सम्पूर्ण विश्व मानव आर्य धर्म व आर्य समाज को उपेक्षित तथा ग्रहण नहीं करते है, परिणाम स्वरूप सर्वत्र अराजकता, अनैतिकता, राष्ट्र द्रोह, व संस्कार हीनता ही नजर आती है। मुसलमान, ईसाई, जैनी, पौराणिक आदि किसी पुरूष के सामने आप आर्यसमाज का नाम कह दीजिये, वह सुनते ही तत्काल महर्षि दयानन्द का नाम सुना होगा यदि कोई अमरीका से कोलम्बस के नाम को अलग नहीं कर सकता, तो क्या आर्य समाज से उसके पुनर्जन्मदाता स्वामी दयानन्द के नाम को पृथक कर सकता है? यदि आर्य समाज का नाम लेते ही स्वामी दयानन्द का नाम स्मरण हो जाता है तो वास्तव में आर्य समाज से बढ़कर स्वामी जी का स्मरण चिन्ह नहीं हो सकता है।

स्थूलदर्शी पुरूषों ने संसार के इतिहास में स्थूल वस्तुओं को स्मारक माना है, जैसे कि मुसलमान मदीना को अपने पूर्वजों का स्मारक मानते है, ईसाईलोग सूली की मूर्ति को अपना स्मारक मानते हैं, बौद्ध की मूर्ति को उसका स्मारक ठहराते है। यदि हम संसार के कथित धर्मों का आचार विचार इकट्ठा किया करें तो इससे सार यह निकलता है कि वह किसी स्थूल पदार्थ को अपने किसी महात्मा का स्मारक बनाते है। किन्तु उनके स्थूल पदार्थ भिन्न है जो उनके विचार में स्मारक का कार्य करते है।

यदि मान भी लें कि कोई स्थूल पदार्थ किसी महात्मा का स्मारक हो सकता है तो यह स्मारक केवल परिचायक व अल्पलाम देने वाला है और उसकी अपेक्षा वह स्मारक जहां उसके सिधान्तों का प्रचार होता हो तो महान लाभ देने वाला होता है। जैसे मान लो एक मनुष्य महर्षि दयानन्द के चित्र बनाकर बेचता है और दूसरा गुरूकुल

www.thearyasamaj.org

व आर्य समाज खोल कर उसके सिधान्तों को आगे बढ़ाता है, तो दूसरे के सामने पहले वाले को बौना समझना चाहिए। विचार कर देखा जाए तो महात्मा जन अपने चित्र अपने रूप अपना नाम अपने परिवार की बढ़ाई करने नहीं आते, परन्तु अपने उद्देश्यों का आचार करते हुए अपने नाम तक की परवाह नहीं करते, अपितु वह ईश्वरीय सिधान्तों पर जन समुदाय को चलने का उपेदश देते है, अपने को जन कल्याण मे समर्पित कर देते है। पौराणिक जन यदि समझते है कि उनकी काली देवी हिंसा करने वाली थी तो उनके स्मारक को मन्दिर के रूप में पूरा कर रहे है जहां पर निरपराध प्राणियों के गले काटते हुए मनुष्यों को एक अपवित्र एवं पाप की शिक्षा देते हुए प्रकट कर रहे हैं। इसी प्रकार सभी मतो वाले भी भिन्न भिन्न मूर्तिया रख कर जन साधारण को उनको परमेश्वर मान कर पाप के भागी बन रहे है। महर्षि दयानन्द सरस्वती जी उस स्मारक से सम्बन्ध रखते थे जिससे कार्य पूरा होता रहे। यदि वह देखते थे कि कोई कार्य हमारे उद्देश्य को पूर्ण नहीं करता तो उस कार्य को स्वयं ही उसके विरूद्ध तोड़ने वाले हो जाते थे। फर्रूखाबाद, आदि स्थानों की पाठशालाएँ इस बात को सिद्ध करती है, जब विद्यार्थी आर्ष ग्रन्थ पढ़ाने पर भी पौराणिक ही बनकर निकलने लगे तो स्वामी जी ने इन शालाओं को स्वयं ही तोड़ देना उचित समझा। इससे हमको जानना चाहिए। कि आर्य समाज गुरूकुल व अन्य आर्ष शिक्षण संस्थाएँ, व आर्ष लेखन ही महर्षि के उद्देश्य को पूर्ण करते हैं।

पं0 गुरूदत्त अपने व्याख्यानों में कहा करते थे कि केवल ईंट पत्थर पर किसी ऋर्षि का नाम खुदवा देने से ऋषि स्मारक नहीं बन सकता किन्तु यदि ऋषि का स्मारक बनाना चाहते हो तो उनके सिद्धान्तों का प्रचार करके दिखाओ, जिस सिधान्तों का प्रचार वह ऋषि स्वयं करते थे। दयानन्द के सिद्धान्तों का स्मारक यही है कि वेद के सिद्धान्तों का संसार में प्रचार किया जाऐ। जैसे की उन्होंने अपने शिक्षा पत्र वसीयतनामें में प्रथम वेद आदि शास्त्रों के प्रचार अर्थात उनकी व्याख्या करने कराने पढ़ने-पढ़ाने सुनने-सुनाने छापने-छपवाने आदि और द्वीप द्वीपान्तर में भेजकर सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करने तक आर्यावर्त के अनाथ और दीन मनुष्यों को सत्य शिक्षा देना पुरूषार्थ करना लिखा है अत: उनकी पूर्ति करना ही महर्षि का स्मारक हो सकता है।

महर्षि के कार्यकाल और उसके पश्चात आर्य समाज बहुत कार्य कर रहा है जनसंख्या बढ़ने के अनुपात में रूढ़ी परम्परायें व अन्धविश्वास भी बहुत बढ़ गया है आर्य समाज समस्त चुनौतियों का सामना यथा योग्य कर रहा है। देखा जाऐ तो वेदों को और मानवता को आर्य समाज ने जिन्दा रखा हुआ है। आज के पाश्चात्य वातावरण में आर्य समाज को बहुत कार्य करने की आवश्यकता है। हम आर्य जनों को पदवाद प्रभाववाद हट धर्मी एक दूसरे की उपेक्षा करके टांग खीचने की प्रवृत्ति, केवल आर्य समाजों में कैद तथा एक शसक्त संगठन का अभाव आदि अनेक विघटन कार्यों से बचना चाहिए।

मैं परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ कि प्रभो हमको पुरूषार्थ दीजिये कि हम आर्य समाज की उन्नति करते हुए वैदिक धर्म की पताकाओं को सम्पूर्ण विश्व में फहराते हुए महर्षि दयानन्द के प्रदान किये हुए वेदों के प्रकाश को देश देशान्तरों में फैला सके। और आर्यसमाज को ही महर्षि का स्मारक बनाते हुए ऋषि ऋण से उद्धरित होते हुए ऋषि सन्तान कहलाने के अधिकारी बने।

पं० उम्मेद सिंह, विशारद, उत्तराखण्ड

www.thearyasamaj.org

वह व्यक्ति फिर भी शांत है। कष्ट से व्यथित और विचलित होना तो एक ओर रहा, उसके मुखमण्डल पर सहज मुस्कान ही खेल रही है। कैसी दिव्य आत्मा है। जैसे-जैसे दिन बदलता गया शाम को चार बजे के पश्चात् महाराज ने सभी आर्यों को अपने निकट बुलाया, साढ़े पांच बजे सभी भक्तों को पीछे खड़े हो जाने का आदेश दिये केवल पं० गुरूदत्त को कमरे में ठहराये रखा। ऋषि की तीक्ष्ण दिव्य दृष्टि ने समूह में से उस रत्न को पहचान लिया था, जो चाहिये था वह मिल गया, इसलिये जब सामने कोई नहीं रहा तो ऋषि ने उन्हें अपने अति निकट बुलाकर बहुत स्नेह के साथ दो-चार शब्द में कुछ कहा भी। (उस घटना को पं० युधिष्ठिर मीमांसक जी इस प्रकार लिखते हैं- यद्यपि स्वामी दयानन्द ने गुरूदत्त विद्यार्थी को अपने विशिष्ट कार्य के लिये योग्यतम समझा, इसलिये उन्होने गुरूदत्त विद्यार्थी में शक्तिपात द्वारा वेदार्थ के विशेष ज्ञान को संचारित किया। इसलिये हम उनके जीवन में उस घटना के कुछ काल पश्चात् ही वेद विषयक गहन उपदेश देते हुए पाते हैं) तब सभी दरवाजे और रोशनदान खुलवा दिये। फिर पूछा कौन सा पक्ष, क्या तिथि और वार है, तब मोहन लाल, विष्णु लाल पाण्डया ने उत्तर दिया, कृष्ण पक्ष अमावस्या और मंगलवार है तत्पश्चात् ईश्वर प्रार्थना के साथ हर्ष सहित गायत्री मंत्र एवं विश्वानिदेव मंत्र पाठ करने लगे। थोड़ी देर के लिये समा धिस्थ हुए, नेत्र खोले सीधे लेट गये फिर बोले हे सर्व शक्तिमान परमेश्वर। तेरी यही इच्छा है, तेरी यही इच्छा है। तेरी इच्छा पूर्ण हो हाहा। तूने अच्छी लीला की, इतना कह कर करवट ली और और श्वास को रोककर एक बार में ही प्राण त्याग दिये। बस कार्तिक वदी अमावस्या विक्रमी सम्वत् 1940 (30 अक्टूबर 1883) मंगलवार को शाम 6 बजे अमृत पुत्र ने स्वेच्छा से पिता की गोद में स्थान पा लिया। महर्षि दयानन्द संसार छोड़कर चल दिये, परन्तु जाते-जाते प्रकाश फैला गये, दीपक ने बुझते-बुझते एक और दीपक को प्रकाशित कर दिया। जीवन से जीवन दान की कहानी अनेक बार सुनी पर मृत्यु से जीवन मिला हो, यह अनोखी घटना पहली बार घटी। अगणित बार मूर्ति पर चूहे चढ़े, परन्तु केवल मूल शंकर ही दयानन्द बन पाया। एक ने सेब को गिरते देखा तो उठा कर खा लिया, पर दूसरा न्यूटन बन गया। एक ने ज्योति बिलीन होते देखी तो रो दिया, दूसरा गुरूदत्त बन गया। एक सूर्य अस्तांचल गामी था तो दूसरा सूर्य का उदय हो गया। अनेक प्रश्नों के जंजाल में जब लोग फसने लगे। सोचा अब कौन चलेगा इस राह पर? दयानन्द जैसा बल, विद्या और साहस कौन दिखायेगा? क्या साधु की साधना व्यर्थ जायेगी? क्या प्रकाश की मौत अंधकार के हाथों होगी। ऐसे प्रश्नों के उत्तर देने के लिए आर्य युवक गुरूदत्त रूपी लघु दीपक ने उस महान सूर्य के समक्ष मस्तक झुका दिया। कहा, गुरूदेव आप चल दिये तो अब अंधकार से मैं लड़ूँगा।

www.thearyasamaj.org

आर्य संकल्प

रजि. नं0-पी.टी.260

मुझे आशीर्वाद दीजिये। मुझमें आप जैसा बल नहीं, प्रकाश नहीं सामर्थ नहीं, पर! हृदय में लगन है, भावना है, भावना में सत्यता है। पैरों में चलने की अभिलाषा है। बस! तुम्हारी राह पर मैं चलूँगा। हे देव! जब तक इस दीप में किंचित मात्र भी बत्ती तथा तेल रहेगा, यह तिल-तिल कर के जलता रहेगा और अंधकार से टक्कर लेगा। गुरूदत्त विद्यार्थी नास्तिक था, आस्तिक बन गया। और वेदों के उद्धार में अपना सारा जीवन लगा दिया। पण्डित गुरूदत्त ने ऋषिवर को समझ लिया था। इस लिये आर्य समाज अमृतसर के उत्सव पर भाषा देते हुए कहा था कि ''ऋषि के महत्व का लोगों को दो सौ वर्ष बाद बोध होगा, जब विद्वान पक्षपात त्याग कर उनके ग्रंथों पर विचार करेंगे। अभी लोगों की यह स्थिति नहीं, की बातों को समझ सके।'' श्रद्धालु शिष्य ने गुरू के जीवन लक्ष्य को ही अपना जीवन-लक्ष्य बना लिया और यही स्वप्न संजोया कि पांच सहत्र वर्ष पूर्व एवं महाभारत युद्ध पृथ्वी पर हुआ था जिसके कारण वेदादि शास्त्रों का पठन-पाठन समाप्त हो गया। अब एक विद्या रूपी महाभारत की सामग्री पृथ्वी पर एकत्र हो रही है जिसके कारण पुनः वेदों का पठन-पाठन पृथ्वी पर फैलेगा। इस युद्ध का बीज स्वामी दयानन्द ने आर्य समाज रूपी साधन द्वारा भूगोल में डाल दिया है।''

धन्य हैं गुरू देव दयानन्द और उनके श्रद्धालु शिष्य, पं० गुरूदत्त, विद्यार्थी जिन्होंने वैदिक सभ्यता एवं संस्कृति के शत्रुओं को मुहतोड़ जवाब देकर संसार को चकित कर दिया। प्रत्येक आर्य उनके चरणों में नतमस्तक है।

संजय सत्यार्थी

प्रेषक :
सभा-मंत्री
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला
पटना-८०० ००४

सेवा में, मुद्रित सामग्री
श्री/मेसर्स..........
मो०..........
पो०..........
जिला..........
(प्रेषिती के न मिलने पर यह अंक प्रेषक को ही लौटा दें।)

स्वत्वाधिकारी, बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा,, श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 के लिए श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता (मंत्री) द्वारा जय उमा प्रिन्टर्स, पटना द्वारा मुदित एवं प्रकाशित।